देवगन्धर्वरम्याय राधामानविधायिने । मानमंदिर संज्ञाय नमस्ते रत्नभूमये।।

मानगढ़

मान मंदिर

मासिक पत्रिका

श्रीराधामानविहारिणे नमः

अक्टूबर २०१६

ब्रज दर्शन विशेषांक

राधारानी को रंगीलो दरबार, परयो रह कुंजन में ।।
मार धार सबकी तू सहियो
भूख प्यास को ध्यान न रखियो
तब कृपा करें सरकार, परयो रह कुंजन में ।
राधा राधा रटन लगैयो
तन मन धन सों सेवा करियो
तेरो है जाय बेड़ा पार, परयो रह कुंजन में ।
इन द्वारन सों कबहू न हटियो
देहरी पर सिर घिसतो रहियो
रस बरसै धूआधार, परयो रह कुंजन में ।।

श्रीराधामानविहारिणे नमः

नमामि ब्रजोद्धारकम्	01
ब्रजोपासना	02
"सन् १९८८ से संचालित श्रीराधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा के लम्बे सफर का एक दृश्य"	04
धामी के पूर्व धामावतार	06
अनन्य कृष्णाश्रित ब्रजवासी	08
भक्ति ही शक्ति है	10
वृन्दावन सेवहु भाँति भली	12
काल से मुक्त होने का रास्ता	14
भक्त–विरह–कातर करुनामय	18
निष्काम भगवन्नाम प्रचार–प्रसार	21
गोपाल की गौचारण लीला	22
भेदबुद्धि वैष्णवता नहीं अपितु अपराध	24
Nature of Vraja	26
ब्रजधाम की सवा में सतत् प्रयत्नशील मान मंदिर	28
श्री राधारानी ब्रजयात्रा (मानसी परिक्रमा)	31

नमामि ब्रजोद्धारकम्
वृन्दावन ब्रजभूमि जानत न कोऊ
प्राय दई दरसाय जैसी शुक मुख गाई है

ब्रजभूमि भारतीय जनमानस के आकर्षण का केन्द्र रही है क्योंकि भारत की संस्कृति का यह मूल आधार है । भगवान् श्रीकृष्ण अवतरण क्षेत्र व लीलास्थली होने से करोड़ों भक्तों की आस्था भी यहाँ से जुड़ी है तभी तो भारत वर्ष के ही नहीं अपितु सारे संसार से श्रद्धालु यहाँ आते हैं, दर्शन करते हैं व इस पवित्र भूमि की परिक्रमा करते हैं ।

ब्रजरज का सेवन आज के बड़े से बड़े पापात्माओं को भी निर्मल बनाने वाला है । ऐसी महिमा किसी अन्य पुण्य कार्यों में नहीं है, तभी तो बड़े–बड़े संत–महन्त, राजा–महाराजा अपना कुल, वैभव, धनधान्य छोड़कर यहाँ की रज का आश्रय लेते हैं परन्तु कालक्रम से लुप्तप्रायः होता हुआ ब्रज का स्वरूप यथा समय महात्माओं को उद्वेलित करता रहा है ।

चैतन्य महाप्रभु, वज्रनाभजी, नारायण भट्ट जी आदि ने ब्रज को प्रकट किया, बचाया परन्तु कलिकाल जैसे सब कुछ निगल ही जायेगा । बड़ी–बड़ी अट्टालिकाएँ, आधुनिक सुख–सुविधाएँ तथा हमारी महत्वाकांक्षाओं ने स्वरूप को और भी विकृत कर दिया फिर भी सनातन नाम वाली यहाँ की संस्कृति अपने नाम से भ्रष्ट कैसे हो सकती है ।

भगवान् महापुरुषों के रूप में अवतरित होकर जीवों के कल्याणार्थ उसे सदा जीवित रखते हैं । ऐसे ही परम पुरुष विरक्त संत श्रद्धेय श्री रमेश बाबा जी महाराज जो प्रयाग की पावन भूमि में अवतरित हो बाल्यकाल से ही ब्रजाराधन का स्वप्न देखते हुए वैराग्य ग्रहण कर श्रीधाम बरसाना के ब्रह्माचल पर्वत पर मानिनी श्रीराधा के तत्कालीन खण्डहर भवन 'मान मन्दिर' में रहे ।

उस समय यह स्थल चोर–डाकुओं का अड्डा था परन्तु महापुरुष अपनी पावन सन्निधि से जनमानस को तो पवित्र करते ही हैं साथ ही क्षेत्र के भौम स्वरूप को भी सजाते–संवारते हैं, वही किया श्री रमेश बाबा जी ने । लुप्तप्रायः होते हुए ब्रज के स्वरूप को उन्होंने पिछले ६४ वर्षों के अथक प्रयास से बचाया । ■

ब्रजोपासना

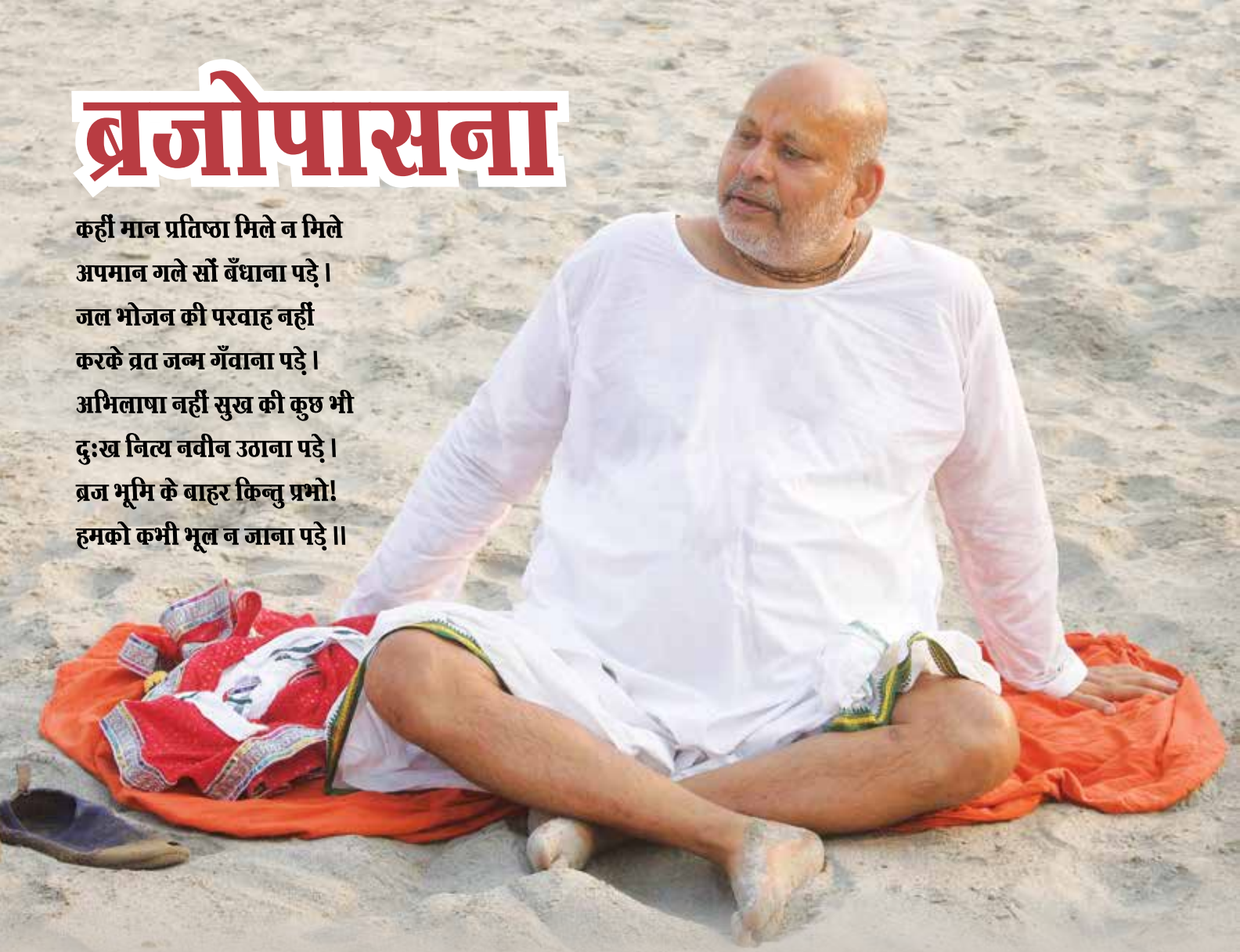

कहीं मान प्रतिष्ठा मिले न मिले
अपमान गले सों बँधाना पड़े।
जल भोजन की परवाह नहीं
करके व्रत जन्म गँवाना पड़े।
अभिलाषा नहीं सुख की कुछ भी
दुःख नित्य नवीन उठाना पड़े।
ब्रज भूमि के बाहर किन्तु प्रभो!
हमको कभी भूल न जाना पड़े॥

ब्रजोपासक बनना है तो सम्मान की भूख नहीं रखनी चाहिए, गँवार बन जाओ । ब्रज में तो परमेश्वर भी गाली खाता है । इसी का नाम ब्रजोपासना है । किसी ने अपमान कर दिया तो हँस जाओ । जो गँवार नही बना उसे ब्रज रस नहीं मिलेगा ।

अरे, ब्रज में जब भगवान् ने अपनी भगवत्ता छोड़ दी तो फिर हम लोग क्या चीज हैं? यहाँ आकर के भी जो सम्मान चाहता है उसे ब्रज रस कभी नहीं मिलेगा। यहाँ तो अपमान सहने के लिए ही आओ । ब्रज में इसीलिए आओ कि ब्रजवासी हमको गाली दें । रसिकों ने कहा है –

तजि देह को गेह को नेह सबै,
बसिये सुख सौं चल कुंज गली ।
उमड़ी ही रहे जहाँ स्याम घटा,
परसे सरसे रस भाँति भली ।।

घर–परिवार, शरीर आदि का प्रेम छोड़कर तब कुञ्ज गली में चलो ।

क्यों वहाँ क्या मिलेगा?

वही मिलेगा जो अब तक नहीं मिला । वहाँ नित्य राधाकृष्ण–रस लुटता है । ये कहीं बाहर नहीं मिलेगा । मान–सम्मान से नहीं मिलेगा । बाहर तो चौरासी लाख योनियाँ मिलेंगी ।

ब्रज की मिट्टी को रजरानी कहते हैं । क्यों? उसका कारण है – गंगा जी तो एक बार श्रीकृष्ण के चरणों के धोवन से प्रकट हुई थीं परन्तु ब्रज रज को तो श्रीकृष्ण रोज चाटते हैं अर्थात् खाते हैं । मईया कहती है कि "तू यहाँ की मिट्टी क्यों खाता है?" तो गोपाल जी कहते हैं –

ऐसो स्वाद नहीं माखन में,
जो रस है ब्रज रज चाखन में ।।

यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण नंगे पाँव चलते थे । तभी गोपियों ने कहा था "हे प्यारे ! आपको इतना आनन्द लक्ष्मी जी के सुकोमल हाथों से पैर दबवाने में नही मिला, जितना ब्रज के काँटों–कंकणों में मिला।" ये हालत भगवान् की है । फिर हम जैसे जो लोग हैं वे न जाने अपने मन में क्या बनते हैं?

यद्येवं तर्हि व्यादे ही इत्युक्तः स भगवान् हरिः ।
व्यादत्ताव्याहतैश्वर्यः क्रीडामनु जबालकः ।।

(भा. १०.८.३६)

अरे, यहाँ तो भगवान् तक को अपनी भगवत्ता छोड़नी पड़ी तब फिर प्रेम मिला । सम्मान में मरते जाओ तो प्रेम आदि कुछ नही मिलेगा, सिर्फ चौरासी लाख योनियाँ ही मिलेंगी । गोपियों ने कहा है –

यत्ते सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ।
तेनाटवीमटसि तद् व्यथते न किं स्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ।।

(भा.१०.३१.१९)

ये वही कृष्ण हैं, जिनके चरणों को लक्ष्मी जी धीरे–धीरे दिन–रात सहलाती हैं । क्यों ? क्योंकि हमारे हाथ तो कठोर हैं और प्रभु के चरण कोमल हैं । लक्ष्मी जी जैसा उनके चरणों का लालन करती हैं और जैसा प्यार करती हैं वैसा कोई भी नहीं कर सकता पर ब्रज में भगवान् काँटों में दौड़ते हैं, ब्रज में गँवारों के साथ भगवान् भी गँवार बन जाते हैं । "इस ब्रज में आकर जो गँवार नहीं बना वह ब्रज भाव नहीं जान पाया ।

सब लोग लक्ष्मी चाहते हैं । मन्दिर वाला पैसा चाहता है, पुजारी पैसा चाहता है, चोर पैसा चाहता है, कथा करने वाला पैसा चाहता है, कीर्तन करने वाला पैसा चाहता है, पापी पैसा चाहता है, सब पैसा चाहते हैं परन्तु वे लक्ष्मी जी सब छोड़कर क्या चाहती हैं ? गोपियों ने गोपीगीत में कहा है –

जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः
श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि ।

(भा. १०.३१.१)

वे तो वृन्दावन विहारीलाल के चरणकमलों की रज चाहती हैं । इसका एक अर्थ ये भी है कि जो पैसा चाहता है, उसको ब्रज रस नहीं मिलेगा ।

नेमं विरिञ्चो न भवो न श्रीरप्यङ्गसंश्रया ।

(भा. १०.९.२०)

जब ब्रह्मा, शिव, महालक्ष्मी को नहीं मिला तो जो हम जैसे मक्खी–मच्छर क्या चीज हैं?

जब तक तुम्हारे मन में पैसे की तृष्णा है तब तक ब्रज रस नहीं मिलेगा । ये बात समझ लो कि कोई भी गोपी भगवान् के ऐश्वर्य रूप पर मोहित नहीं हुई ।

ब्रजमण्डलान्तर्गत पैंठे गाँव में भगवान् चतुर्भुज रूप से प्रगट हुए तो गोपियाँ डर गयीं और उनसे बोली भी नहीं। गोपियाँ प्रभु को छोड़ के चली गयीं । ब्रज में प्रेम का विकास है । यहाँ कृष्ण वनों में घूम रहे हैं, बिना बुलाये सब जगह चले जाते हैं । घर–घर चोरी करते हैं, उनमें कोई भी बड़प्पन नहीं है । गायों की सेवा करते हैं, ग्वालबालों की सेवा करते हैं, गोपियों की सेवा करते हैं । प्रेम है यहाँ । ये वही ब्रज है । परन्तु हमें इसी ब्रज में वह रूप दिखाई नहीं देता जिसका वर्णन महात्माओं ने किया है –

धनि धनि वृन्दावन के रूख ।
रसिकन पारिजात यह दीखत,
विमुखन ढाक पिलूक ।

हमें तो हर जगह गंदगी दिखाई देती है, ब्रजवासियों में भी विकार दिखाई देते हैं क्योंकि हमारे भाव में दूषणता है । ■

झोपड़ी ब्रज में बना ली जायेगी ।
ब्रज की रज तन में रमा ली जायेगी ।।
श्याम प्यारे अब हमारे हो गये,
अब उन्हीं से लौ लगा ली जायेगी ।
सौंपा इनको आज से हमने सभी,
दासी चरणों से लगा ली जायेगी ।
ब्रज की गलियों में फिरेंगे झूमते,
मीठी वंशी अब सुना दी जायेगी ।
श्याम श्यामा भी मिलेंगे खेलते,
बिगड़ी किस्मत अब बनाली जायेगी ।
हार अंसुवों का बनाया है तुझे,
बाँकी झाँकी अब दिखादी जायेगी ।।

“सन् १९८८ से संचालित श्री राधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा के लम्बे सफर का एक दृश्य”

राधामाधव जो अकारण करुणावरुणालय हैं; जीवमात्र के कल्याण के लिए हरसम्भव कृपा करुणा किया करते हैं । कलियुग में जीव उतना साधनशील, तपोप्रधान व दानशील नहीं हो सकता फिर दीनहीन जीव के उद्धार का क्या साधन हो सकता है ? भगवान् अपने धाम का अवतरण करते हैं । वे स्वयं अपनी आह्लादिनी शक्ति श्रीराधारानी से प्रार्थना करते हैं कि "हे किशोरी जू आप धराधाम पर पधारें" परन्तु वे यह कहकर मना कर देती हैं कि जहाँ वृन्दावन नहीं है, श्री गिरिराज जी नहीं हैं, श्रीयमुना जी नहीं हैं, वहाँ हमारा मन नहीं लग सकता। भगवान् ने इन सभी को यहाँ स्थापित किया औराम–सेवा का सुअवसर सभी को प्रदान किया ।

धाम और धामी में बिल्कुल भी भेद नहीं है फिर धाम में अखण्ड सेवा भी सम्भव है । जो धामी नहीं दे सकता, वह धाम प्रदान कर देता है । ब्रह्मा जी ने अपराध किया था तो बाल–वत्स का हरण किया उस अपराध को

धाम ने ही क्षमा किया । ब्रह्मा जी ने ब्रजपरिक्रमा किया था । ब्रज के विषय में आज संकीर्णता के कारण अनेक मतभेद हो गये । ब्रज के भौगोलिक व सांस्कृतिक स्वरूप को लोगों ने भ्रमात्मक बना दिया है। असीम को ससीम बना दिया गया । लोग मथुरा, वृन्दावन, गोवर्द्धान, बरसाना, कामवन तक ही ब्रज को मानने लगे। जबकि विद्वानों ने अलीगढ़, आगरा, एटा, इटावा, मैनपुरी,धौलपुर, ग्वालियर, डीग, भरतपुर, वयाना, करौली, अलवर तक ब्रजभावना का दर्शन किया है। अनेक महापुरुषों ने भी उक्त स्थलों का उल्लेख अपनी वाणियों में किया है। यही कारण है हमारे ब्रज के परम विरक्त संत पूज्य श्रीरमेश बाबा जी महाराज ने कई कारणों से ब्रज के विस्तृत भूभाग का अनुसन्धान कराया तथा उन्हीं की कृपापात्रा बालसाध्वी सुश्री मुरलिका शर्मा ने अपने ६१६ पृष्ठ के वृहद्ग्रन्थ 'रसीली ब्रज यात्रा' में वृहद् ब्रज का सविस्तार वर्णन किया है । बाबा के द्वारा भी ब्रजपरिक्रमा को १९८८ से प्रारम्भ कराया गया । वह भी उस स्थिति में जब मान मंदिर पर कोई अर्थसाधन नहीं था । ११ मन सत्तू कर्ज करके लाया गया क्योंकि ब्रजदर्शन को भी अर्थसाध्य कर दिया । धर्म को व्यापार बना दिया। ऐसे लोगों को परम दयालु संत ही अपनी कृपा करुणा से आप्लावित कर सकते हैं । १९८८ में २०० यात्रियों से राधारानी ब्रजयात्रा

का प्रारम्भ हुआ जिसमें सबकुछ निःशुल्क रखा और यह भी विधान बना दिया कि यात्रार्थ कुछ भी याचना नहीं करना है । यही कारण है कि श्री राधारानी ब्रजयात्रा बड़ी चमत्कारिक यात्रा बन गयी । २०० से बीसों हजार तक की संख्या, इसमें भी भोजन, आवास, उपचार, सबकुछ निःशुल्क, यात्रियों को भगवान् समझकर उनका सत्कार । ऐसी स्थिति में अनेक चमत्कारों का होना भी स्वाभाविक ही है । हर यात्रा में कोई न कोई चमत्कार होता है । ४० दिवसीय परिक्रमा ब्रज के अनेक गाँवों में बारी–बारी से जाती है । इस बार धरणीधर (वेसवाँ) जैसे स्थलों को भी सम्मिलित किया जा रहा है । चूँकि ब्रज बहुत व्यापक है, इस कारण समस्त ब्रज का एक बार में दर्शन सम्भव नहीं है । पूर्व में हास्यवन (अलीगढ़ जिले का बरहद गाँव), पश्चिम में उपहार वन (गुड़गाँव जिले में सोन नदी तक), दक्षिण में जहुवन (आगरा जिले में बटेश्वर गाँव) एवं उत्तर में भुवनवन (भूषणवन, शेरगढ़ परगना) ।

इत बरहद उत सोनहद उत सूरसेन को गाँव ।
ब्रज चौरासी कोस में मथुरा मण्डल धाम ।।

ब्रज यात्रा में अनेक चमत्कार देखे गये क्योंकि यह यात्रा पूर्णतया ब्रजनाथ पर ही निर्भर रहती है । रावल के पड़ाव पर एक बार यात्रा में मध्य रात्रि के समय संकीर्तन में बैठे कुछ आराधकों ने सुना कि जो ध्वनि चल रही थी, उसी स्वर में ऐसी मधुर वंशी का श्रवण हुआ जो कभी जीवन में सुनी नहीं हो । वह भी माइक में बज रही थी। जबकि वहाँ वंशी बजाने वाला कोई नहीं था । इसके अतिरिक्त एक महिला जो बाबा श्री को नित्य दो लोंग ब्रह्ममुहूर्त में दिया करती थी, एक दिन वह मध्यरात्रि को ही धाम प्राप्त कर गयी और उस दिन भी एक ओर उसका मृत शरीर पड़ा था तो दूसरी ओर प्रातः ५ बजे वही महिला बाबा महाराज को लोंग देने गयी थी । एक अन्य यात्रा में ब्रह्माण्ड घाट पर एक मृत महिला घण्टों हरिनाम संकीर्तन के पश्चात् जीवित हो गयी । ऐसे अनेक चमत्कार प्रतिवर्ष होते रहते हैं । इसके अतिरिक्त करोड़ों का अर्थव्यय बिना याचना के पूरा होता है ।

यात्रा की शक्ति है सतत् हरिनाम संकीर्तन, दूर–दूर तक कई किलोमीटर तक एक ही ध्वनि युगल मन्त्र की हर यात्री के कर्णपुटों में रस घोलती रहती है । सारा वातावरण दिव्य धाम के दिव्य स्वरूप से आलोकित रहता है । गरीब–अमीर के भेद से परे सभी यात्रियों का संगम, विविधताओं में एकता का अनूठा उदाहरण है । हर रोज नया नगर बसता है जो हर प्राणी को भगवान् की लीलाओं व उनके नाम से अलंकृत करता है । संध्या समय पूज्य बाबा श्री धाम महिमा का उल्लेख करते हैं, दर्शित स्थलों पर प्रकाश डालते हैं । ब्रज संस्कृति का अनूठा दर्शन इस यात्रा में होता है । नृत्य करती ब्रज बालिकायें जैसे–जैसे कदम रखती हैं, उनके उस अलौकिक दर्शन से समस्त यात्री दिव्य ब्रज की अनुभूति करते हुए अपने गन्तव्य पर पहुँचते हैं । यह यात्रा ही नहीं अपितु एक उपासना भी है । विजयदशमी के दो दिन पश्चात् त्रयोदशी से प्रतिवर्ष यह यात्रा प्रारम्भ होती है । चौरासी कोस यात्रा जीव की चौरासी काटने का सबसे सरलतम साधन है । एक उपासना है, एक यज्ञ है, एक तपस्या है । एक महापुरुष की महती अनुकम्पा से जो सभी के लिए सहज व सुलभ है ।

इतनी बड़ी व्यवस्थायें किसी जीव की तो सामर्थ्य से बाहर हैं । राधारानी जैसा कि इस यात्रा का नाम है, वही इसका संचालन भी करती हैं । हजारों यात्री, सैकड़ों वाहन, सभी का त्रैकालिक भोजन, वहीं बरसाना से सबका भोजन बनकर जाना फिर निर्विघ्न यात्रा का सम्पन्न होना सबकुछ आश्चर्य से भरा हुआ है ।

आओ, एक झाँकी एक बार अवश्य करें । ■

धामी के पूर्व धामावतार

ब्रह्माजी से प्रार्थित होकर जब श्यामसुन्दर अवनितल पर अवतरण की भूमिका बनाने लगे और श्रीजी से भूतल पर अवतीर्ण होने की प्रार्थना किये; तब श्रीजी ने कहा – हे श्यामसुन्दर !

यत्र वृन्दावनं नास्ति यत्र नो यमुना नदी ।
यत्र गोवर्द्धनो नास्ति तत्र मे न मनः सुखम् ।।

'जहाँ श्री वृन्दावन नहीं है, जहाँ तपन–तनया यमुना नहीं है, जहाँ श्री गिरिराज गोवर्धन नहीं है, वहाँ मेरा मन किसी भी प्रकार स्वस्थ प्रसन्न नहीं रहेगा ।' तब श्रीजी के प्रसन्नतार्थ ८४ कोस की सम्पूर्ण वसुधा श्री गिरिराज जी, श्रीयमुनाजी को प्रभु ने धरा पर भेजा ।

वेदनागक्रोशभूमिं स्वधाम्नः श्रीहरिःस्वयम् ।
गोवर्धनं च यमुनां प्रेषयामास भूपरि ।।

इस प्रकार धरा पर धामी के पूर्व धाम का अवतरण हुआ। ■

श्रीधाम वृन्दावन में प्रवाहित यमुना जी

श्री गिरिराज गोवर्धन महाराज

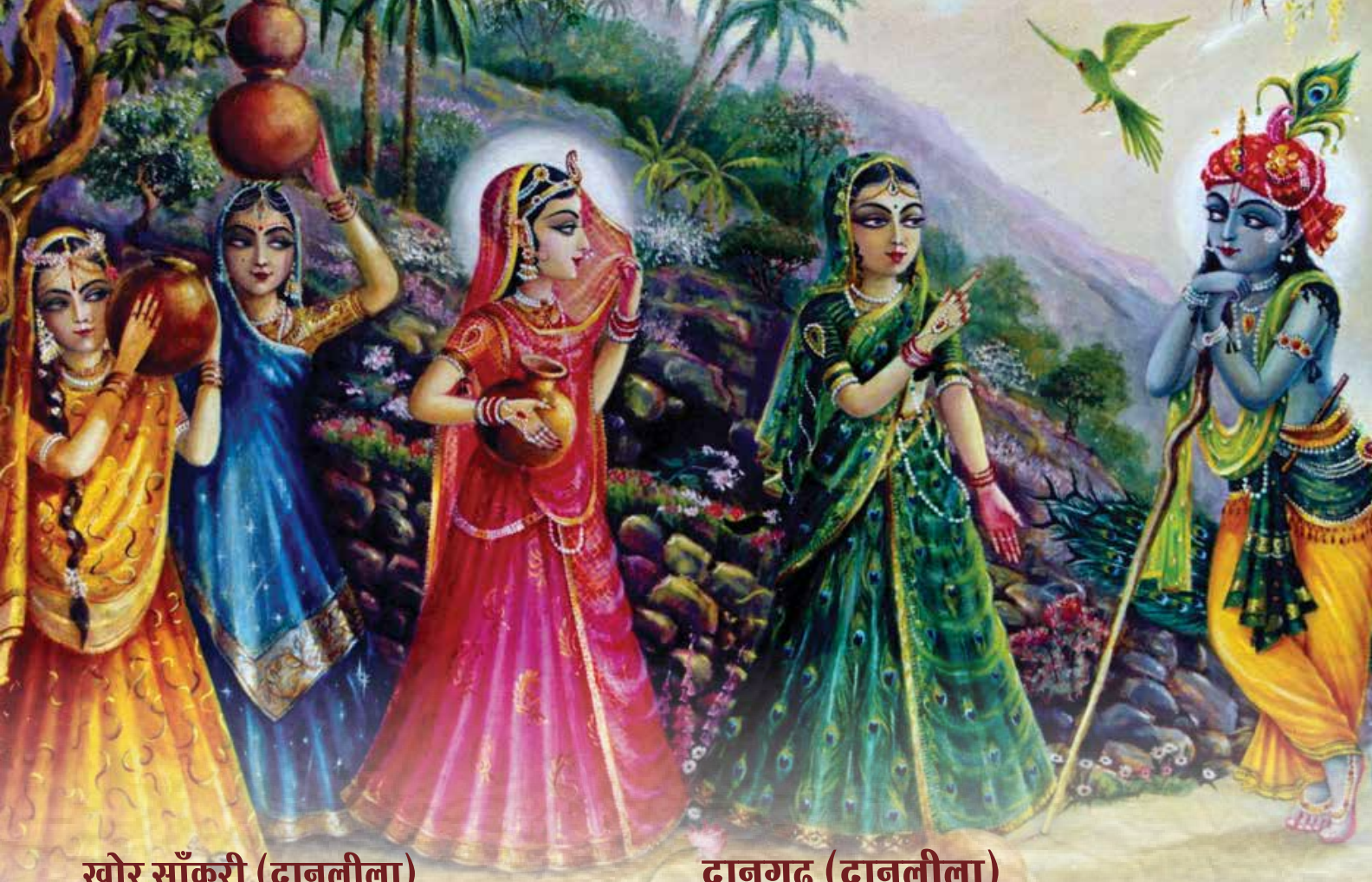

खोर साँकरी (दानलीला)

खोर साँकरी में आज छिप के बिहारी लाल
तरु पै बिराजे दान हेतु चित्त दीनो है ।
ग्वाल बाल संग के हू इत उत घाटिन में
छिपे हरिचंद छल जिये अति कीनो है ।
ताहि समय गोपिन विलोकी कूदी धाय
सब ऊधम मचायो दूध दहि घृत छीनो है ।
दहि जो गिरायो सो तो फेर हू जमाय लैहैं
मन कहा पैहें दान हेतु जोन लीनो है ।।

दानगढ़ (दानलीला)

महादानी वृषभानु किशोरी
तुव कृपावलोकन दान दै री ।
तृषित लोचनि चकोर मेरे
तुम बदन इंदु किरनि पान दै री ।।
सब विधि सुघर सुजान सुन्दरी
सुनि लै विनती कान दै री ।
'गोविन्द' प्रभु पिय चरन परसि कह्यौ
जाचक को तुव मान दै री ।।

मानगढ़ (मानलीला)

आवत जात हौं हार परी री ।
ज्यों ज्यों प्यारो विनती कर पठवत,
त्यों त्यों तू गढ़ मान चढ़ी री ।
तिहारे बीच परे सोई बाबरी,
हौं चौगान की गेंद भई रीं ।
'गोविन्द' प्रभु को वेग मिल भामिनी,
सुभग यामिनी जात बही री ।।

अनन्य कृष्णाश्रित ब्रजवासी

आपत्ति–विपत्ति का पर्वत ब्रज पर बार–बार गिरा किन्तु ब्रजवासियों की अचल निष्ठा डगमगायी नहीं । इन्द्र का कोप उनके लिए मरण संकट बन गया था । एक बछड़े तक के बचने की आशा न थी । चारों ओर स्तम्भ–सदृश वर्षा की स्थूल–धारा, अनवरत तुषारपात, भीषण गड़गड़ाहट; नन्हें शिशुओं को गोद में लेकर उपलपात से रक्षा के लिए कढ़ाई से सिर को ढक लिया । पथ–पृथ्वी का तो दर्शन ही बन्द हो गया, बस चारों ओर अपार जलराशि बार–बार मृत्यु का दर्शन करा रही थी; ऐसी स्थिति में भी इन अनन्यजनों को केवल श्रीकृष्ण ही दिखाई दे रहे थे, उनका ही स्मरण हो रहा था ।

कृष्ण कृष्ण महाभाग त्वन्नाथं गोकुलं प्रभो ।
त्रातुमर्हसि देवान्नः कुपिताद् भक्तवत्सल ।।

(भा.१०.२५.१३)

ब्रजवासी बोले – "हे कृष्ण! हे महाभाग! जीवन रहे या हो मरण, ब्रज के एकमात्र नाथ तुम ही हो और तुम ही रहोगे ।"

यही कहता है एकाश्रय –

"ऐसे नहीं हम चाहनहार
जो आज तुम्हें कल और को चाहैं ।"

(भक्तमाल – प्रथम खण्ड, कवित्त–३ 'टीका में')

तुम तोड़ दो मोह हमारा सखे,
हम मोह कदापि न तोड़ने वाले ।
तुम मोड़ लो चाहे भले मुख को,
हम स्वप्न में चित्त न मोड़ने वाले ।।
तुम जोड़ लो प्रीति किसी से भले,
हम और से प्रीति न जोड़ने वाले ।
तुम छोड़ दो चाहे भले हमको,
हम किन्तु तुम्हें नहीं छोड़ने वाले ।।

थोड़े से कष्ट में फिसलने वाला एकाश्रित नहीं हो सकता । मरण कष्ट से घबराकर शरण बदलने वाले नहीं थे ब्रजवासी जन ।

उनका तो स्पष्ट निर्णय था – "हे कृष्ण! हमारे एकमात्र आश्रयणीय तुम हो और तुम ही रहोगे ।"

भक्त रसखान जी के शब्दों में एकाश्रय –

मानुष हौं तो वही रसखान,
बसों ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन ।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो,
चरौं नित नन्द की गाय मंझारन ।।
जो खग हौं तो कहा बस मेरो,
बसौं नित कालिन्दी कूल की डारन ।
पाहन हौं तो वही गिरि को,
जो कियो कर छत्र पुरन्दर कारन ।।

हम हर हाल में तुम्हारे ही रहें, यह है एकाश्रय ।

श्री नागरीदास जी के शब्दों में एकाश्रित ब्रजवासियों का भाव ।

हमारो मुरली वारो श्याम ।
बिनु मुरली वनमाल चन्द्रिका, नहिं पहिचानत नाम।।
गोपरूप वृन्दावनचारी, ब्रजजन पूरन काम ।
याही सौं हित चित्त पर्यो है, पल छिन आठों याम ।।
नन्दीश्वर गोवर्धन गोकुल, बरसानो बिश्राम ।
नागरिदास द्वारिका मथुरा, इनसों कैसो काम ।।

हमारा तो बस मुरली बजैया कन्हैया है । मुरली, वनमाल और मयूर मुकुट से ही उसकी पहिचान है। हम ब्रजवासियों की इच्छापूर्ति भी वो मयूरमुकुटी, मुरलीधर, वनमाली वृन्दावनबिहारी ही कर सकता है, मथुरानाथ, द्वारिकानाथ नहीं ।

ब्रज तजि हम न तो मथुरा गये, न द्वारिका । कृष्ण

भले मथुरा–द्वारिका गये किन्तु ब्रजवासी नहीं गये, यही तो था एकाश्रय ।

विधि भी मान गये वास्तव में ब्रजवासियों जैसा श्रीकृष्ण के प्रति सम्पूर्ण समर्पण अन्यत्र लक्षित नहीं हो सकता और ब्रह्ममोह लीला के पश्चात् एक बात कहकर प्रश्नवाचक चिह्न लगा दिया – हे देवों के देव! मैं पूछता हूँ आप इन अनन्याश्रितों को इनके सर्वसमर्पण के बदले क्या दे सकते हैं? मैं समझता हूँ कि प्रथम तो आप इन्हें कुछ दे ही नहीं सकते, साहस करके जो कुछ भी देंगे भी तो वह थोड़ा होगा ।

एषां घोषनिवासिनामुत भवान् किं देव रातेति
नश्चेतो विश्वफलात् फलं त्वदपरं कुत्राप्ययन् मुह्यति ।
सद्वेषादिव पूतनापि सकुला त्वामेव देवापिता
यद्धामार्थसुहृत्प्रियात्मतनयप्राणाशयास्त्वत्कृते ।।

(भा. १०.१४.३५)

इन भोले–भाले आश्रितजनों के पास कुल ८ ही वस्तु हैं और वे सब इन्होंने आपको समर्पित कर दी हैं –

धाम – **घर,** द्वार .....इनका घर भी अपने लिए नहीं है ।

अर्थ – **धन,** गोधन .....इनकी कोई भी सम्पत्ति अपने लिए नहीं है ।

अब न वह आश्रय रहा, न वो चमत्कार ।

आजकल तो सम्पत्ति के लिए, जमीन–जायदाद के लिए सब जीवन ही मुकद्दमा लड़ने में निकल जाता है । कलह का कारण है – मैं–मेरेपन का दुराग्रह ।

इन ब्रजवासियों का तो अपना स्वदेह भी नहीं था । यदि वहाँ भी 'मेरा–तेरा' होता तो निश्चित कलह होता और फिर प्रेम रस के संचार का अवसर कहाँ रह जाता; प्रतिदिन नये–नये मुकद्दमे लड़े जाते, कोर्ट–कचहरी होती परन्तु वहाँ माया–मूल 'मेरापन' ही नहीं था ।

वहाँ मेरी वधू, मेरा बालक कहने का भी अवसर न था । क्योंकि –

सुहृद – उनका जो भी कुछ पारिवारिक सम्बन्ध था, वह भी श्रीकृष्ण से था ।

आत्मा – यह देह भी श्रीकृष्ण के लिए था ।

आदिपुराण में स्वयं भगवान् ने अर्जुन से कहा –

निजाङ्गमपि या गोप्यो ममेति समुपासते ।
ताभ्यः परं न मे पार्थ निगूढ़ प्रेमभाजनम् ।।

ये ब्रज देवियां स्वदेह को भी मेरी प्रसन्नता के लिए सजाती हैं, खिलाती–पिलाती हैं, नहलाती हैं ..... । इनका प्रत्येक कार्य–व्यापार मेरे ही निमित्त होता है, अतः ये मेरी निगूढ़ प्रेम भाजना हैं। मैं इनका सर्वस्व हूँ तो ये मेरी सर्वस्व हैं । लीला की सहायिका भी हैं, गुरु भी हैं, शिष्या भी हैं, भोग्या भी हैं, बान्धव भी हैं एवं सहधर्मिणी भी हैं ।

अधिक क्या कहूँ, ब्रजगोपी मेरी क्या नहीं हैं अर्थात् सर्वस्व हैं ।

तनय – इनके बेटा–बेटी सब कृष्णार्पित थे ।

प्राण – प्राण भी श्रीकृष्ण के लिए ।

आशय – अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) भी श्रीकृष्ण का ।

इसके अतिरिक्त और कुछ होता भी तो नहीं है, यदि होता तो वह भी आपका ही व आपके लिए ही ।

अब आप बतावें, आप क्या दे सकते हैं इन अनन्याश्रिताओं को?

यदि आप कहते हैं कि समग्र विश्व का एकमात्र फल तो मैं ही हूँ, मैं इन्हें अपने आपको देता हूँ तो यह न्याय नहीं । क्योंकि हे गोपेश! अपना स्वरूप तो आपने जहर पिलाकर मारने की इच्छा से आई हत्यारिन राक्षसी पूतना को भी दे दिया था और न केवल उसे ही अपितु उसके सब खानदान बकासुर, अघासुर....भाइयों को भी दे दिया और वही स्वरूप इन अनन्याश्रयी ब्रजवासियों को भी देने को कहते हैं तो कहाँ से उन्मुक्त होंगे इनके ऋण से?

इससे अधिक आप दे भी क्या सकते हैं? अतः बात यहीं रहने दीजिए अर्थात् इन ब्रजवासियों के ऋणी ही बने रहिये ।

स्वीकार की स्वयं श्रीकृष्ण ने यह बात और कह भी दिया –

न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां
स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः ।
या माभजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः
संवृश्च्य तद् वः प्रतियातु साधुना ।।

(भा. १०.३२.२२)

हे ब्रजवामाओ! अमर देह से अनन्तकाल तक भी मैं सेवा करके तुम्हारे निश्चल, निर्मल, निर्दोष प्रेम का बदला नहीं चुका सकता । मैं तो सदा–सर्वदा के लिए तुम्हारा ऋणी हो गया हूँ । ■

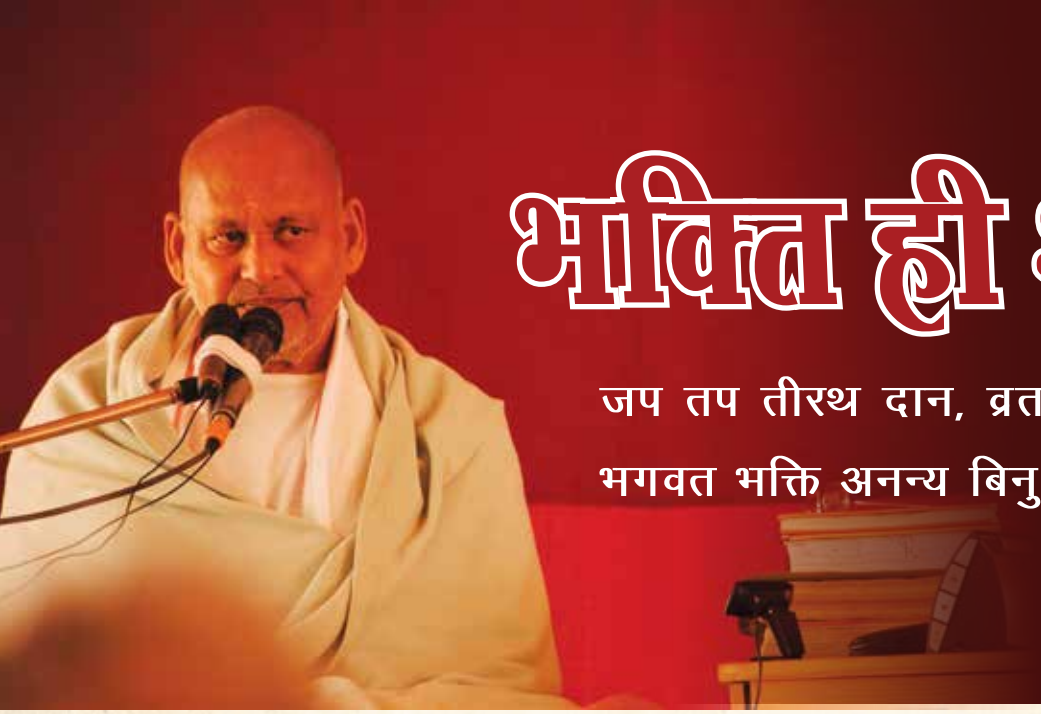

भक्ति ही शक्ति है

जप तप तीरथ दान, व्रत, जोग, जग्य आचार।
भगवत भक्ति अनन्य बिनु जीव भ्रमत संसार ।।

देखो, भगवद्–भक्त के सामने कोई आसुरी शक्ति टिक नहीं सकती है । श्रीमद्भागवत के माहात्म्य में नारद जी ने भक्ति महारानी से कहा है –

न प्रेतो न पिशाचो वा राक्षसो वासुरोऽपि वा ।
भक्तियुक्तमनस्कानां स्पर्शने न प्रभुर्भवेत् ।।

(भा.माहा. २.१७)

हे देवी! जिसके हृदय में भगवान् की भक्ति है – प्रेत, पिशाच, राक्षस, ब्रह्मराक्षस आदि उसको छू भी नहीं सकते हैं, उसके सामने टिक नहीं सकते हैं, यहाँ तक कि लाखों–लाखों वर्ष तक तपस्या करने वाले रावण, हिरण्यकशिपु जैसे असुर भी शरणागत भक्त के आगे टिक नहीं सकते, भक्त में वह शक्ति है । इसका प्रमाण देखो – लंका में विभीषण भजन करते रहे परन्तु रावण उनका कुछ नहीं कर पाया, उन्हें रोक नहीं पाया । जिस समय रावण ने अपमान करके विभीषण को लंका से निकाला, उसी समय सारे लंकावासी आयुहीन हो गए थे, उनकी श्री चली गयी थी ।

रावन जबहिं बिभीषन त्यागा ।
भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा ।।

(रा.च.मा.सुन्दर. ४२)

लंका में इतने अत्याचार होते रहे फिर भी लंका भगवान् के कोप से बची रही, इसका कारण था वहाँ भक्त विभीषण जी का निवास । एक भक्त भी जिस स्थान में रहता है, उस स्थान का योग–क्षेम भगवान् धारण करते हैं ।

अस कहि चला बिभीषनु जबहीं ।
आयूहीन भए सब तबहीं ।।

(रा.च.मा.सुन्दर. ४२)

जब विभीषण लंका छोड़कर चले तो उसी समय सारे लंकावासी आयुहीन हो गए थे अर्थात् मर गए थे। उनकी आयु उसी समय समाप्त हो गई, उसका परिणाम पीछे दिखाई पड़ा जब सारी लंका नष्ट हो गयी । 'भक्ति' वह शक्ति है, जिसकी हम जैसे लोग कल्पना भी नहीं कर सकते हैं ।

दूसरा उदाहरण – हिरण्यकशिपु ने लाखों वर्ष तक तप किया, तप की शक्ति से उसके आगे ब्रह्मा, शिवादि भी नहीं खड़े हो सकते थे । ये भागवत में स्वयं हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद से कहा है –

क्रुद्धस्य यस्य कम्पन्ते त्रयो लोकाः सहेश्वराः ।
तस्य मेऽभीतवन्मूढ शासनं किम्बलोऽत्यगाः ।।

(भा. ७.८.७)

"प्रह्लाद! मैं जब क्रोध करता हूँ तो तीनों लोक, उनके ईश्वर सहित काँपते हैं ।" वह ऐसा शक्तिशाली हिरण्यकशिपु भी भक्त प्रह्लाद की निर्भयता को देखकर आश्चर्य में हो गया कि एक बच्चा मेरे सामने निर्भय खड़ा है और मेरे शासन को भी नहीं मानता तो उसने प्रह्लाद से पूछा –

प्रह्लाद सुप्रभावोऽसि किमेतत्ते विचेष्टितम् ।
एतन्मन्त्रादिजनितमुताहो सहजं तव ।।

(विष्णु. पु. १.१९.२)

"प्रह्लाद! तेरे पास किसका बल है? किसके बल पर तू मेरे सामने निर्भय खड़ा है? क्या तूने कोई तपस्या की या कोई मन्त्र जपा या फिर कोई यज्ञ किया? आखिर तुझमें इतनी शक्ति कहाँ से आयी?"

प्रह्लाद जी ने कहा –

न मन्त्रादिकृतं तात न च नैसर्गिको मम ।
प्रभाव एष सामान्यो यस्य यस्याच्युतो हृदि ।।

(विष्णु. पु. १.१९.४)

"पिताजी! न मैंने कोई मन्त्र जपा है, न कोई तप किया है, न मेरे में कोई स्वाभाविक शक्ति है । "फिर तेरे अन्दर ये प्रभाव कैसे आया? "पिताजी! साधारण–सी बात है, जिसके हृदय में भगवान् श्रीकृष्ण आ गए अर्थात् उनकी भक्ति आ गयी, उसके प्रभाव की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता है । "अब जैसे हम लोग बक–बक करते हैं, हमारे हृदय में लड्डू–पेड़ा, पैसा–धेला, राग–द्वेष है तो हृदय में भगवान् कहाँ से आयेंगे? अपने हृदय को देखना चाहिए कि हमारे अन्दर भोग की चाह तो नहीं है, मान–प्रतिष्ठा की चाह तो नहीं है, धन–सम्पत्ति की चाह तो नहीं हैय अगर ये सब इच्छाएँ बनी हुयी हैं तो लाख जन्म तक तुम साधन करते रहो, कभी भगवान् हृदय में नहीं आयेंगे, ये अकाट्य सिद्धांत है, इसको कोई नहीं काट सकता । कोई जप–तप, योग–यज्ञ, नियम–व्रत करने की जरूरत नहीं है, केवल हृदय में कृष्ण को लाओ, तुम्हारे अन्दर समस्त शक्तियाँ अपने–आप आ जायेंगीं । मीरा ने कोई तपस्या नहीं की, न कोई मन्त्र जपा केवल उनके हृदय में कृष्ण थे, इसलिए सारी राज्य–शक्ति उनके सामने फैल हो गयी, सारी राज्य–सत्ता मिलकर उनका एक बाल भी टेढ़ा नहीं कर पायी । ये हृदय में कृष्ण को लाने का प्रभाव है परन्तु हम जैसे लोग आत्म–निरीक्षण नहीं कर पाते, जीवन भर अंधे बने रहते हैं । सूरदास जी ने लिखा है –

इत–उत देखत जनम गयौ ।
या झूठी माया कैं कारन, दुहुँ दृग अंध भयौ ।।

मनुष्य अपना सारा जीवन इधर–उधर झाँकने में ही बिता देता है । ये स्त्री बड़ी सुन्दर है, इसकी आँख–नाक बड़ी सुन्दर है; ये सेठ जी बड़े धनवान हैं, कुछ दे जायेंगे; बस इसी को देखने में जीवन नष्ट कर देता है । यहाँ तक कि लोग घर छोड़कर निकलते हैं भजन करने, साधु बनने लेकिन ये झाँका–झूँकी की आदत नहीं छोड़ पाते। चलते हैं घर से भगवान् का परिमार्गण करने लेकिन बीच में ही भटक जाते हैं, माया में फँस जाते हैं ।

चलना–चलना सब कहैं, बिरला पहुँचे कोय ।
इक कंचन इक कामिनी, दुर्गम घाटी दोय ।।

धन–सम्पत्ति और सुन्दरी ये दो दुर्गम घाटी हैं । भोग मनुष्य को गिरा देता है, इसलिए कामिनी से दूर रहना चाहिए । दूसरा पैसे का जब बण्डल हाथ में आता है तो मनुष्य उसको छोड़ना नहीं चाहता; इसलिए भगवान् ने भागवत में उद्धव जी से कहा है –

तस्मादनर्थमर्थाख्यं श्रेयोऽर्थी दूरतस्त्यजेत् ।।

(भा. ११.२३.१६)

जो वास्तव में अपना कल्याण चाहता है, उसे पैसा दूर से ही छोड़ देना चाहिए – न पैसे को छुओ, न उसकी ओर देखो और न पैसे की चर्चा सुनो; परन्तु मनुष्य छोड़ नहीं पाता, उसे पैसा बड़ा प्रिय लगता है, स्त्री बड़ी प्रिय लगती है, भले ही चाहे नरक में ही क्यों न जाना पड़े ।

गीता में भी भगवान् ने कहा कि मुझे पाने के लिए चलते तो लाखों लोग हैं परन्तु बीच में ही भटक जाते हैं –

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ।।

(गी. ७.३)

ऐसे भटक जाते हैं कि फिर जीवन में कभी उत्थान नहीं हो पाता है । इसलिए प्रह्लाद जी ने कहा कि अगर हृदय में अच्युत की जगह टका–पैसा आ गया या कामिनी आ गयी तो फिर तुम्हारे भाग्य में भटकना ही लिखा है । आँख खोलकर देखो, ये सारा संसार भटकने में ही लगा है । कोई–कोई भक्त होता है जो इन सबको छोड़ देता है और भवसागर से तर जाता है, बाकी हम जैसे तो भटकते ही रहते हैं । ■

भगति हीन बिरंचि किन होई ।
सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई ।।
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी ।
मोहि प्रान प्रिय असि मम बानी ।।

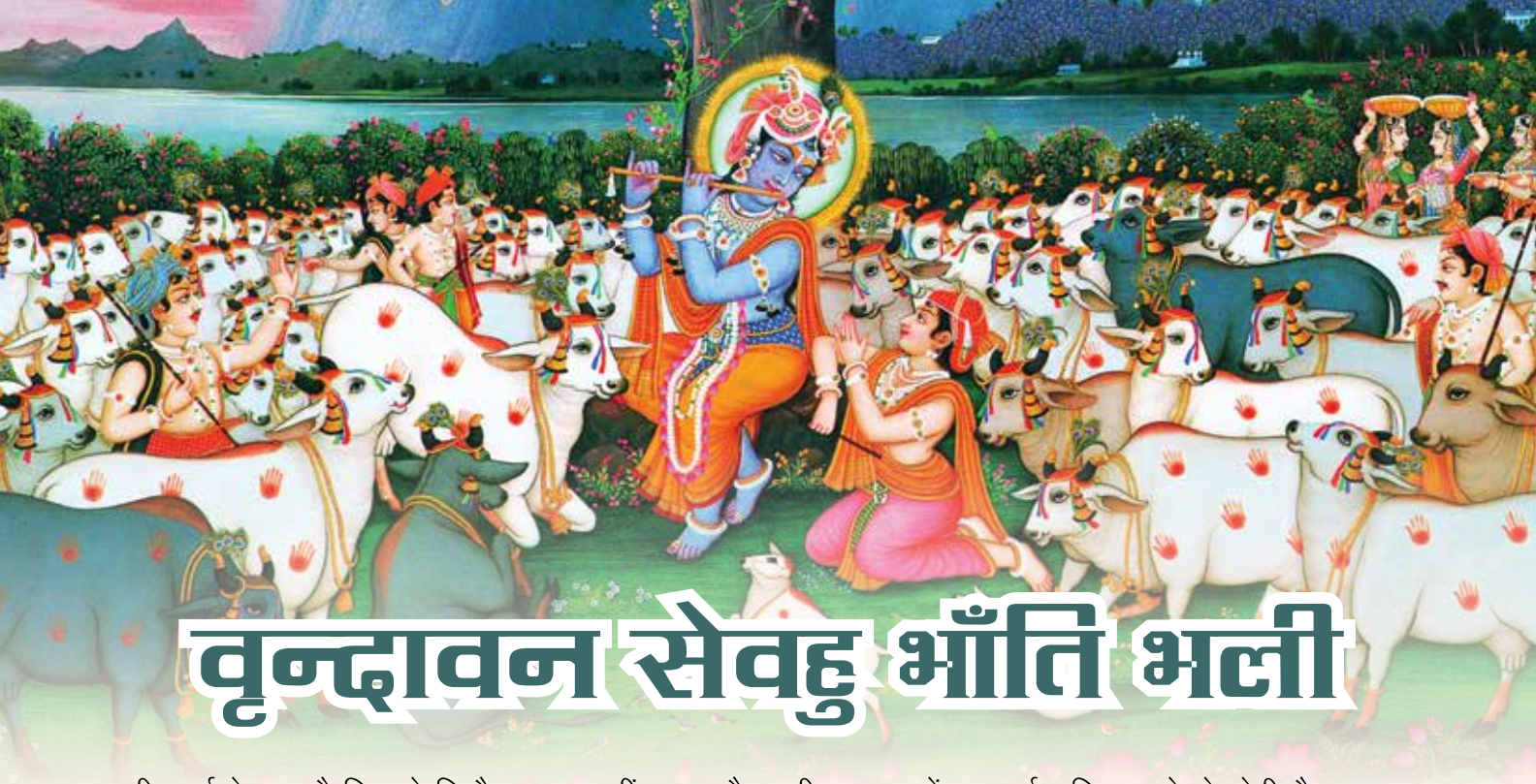

वृन्दावन सेवहु भाँति भली

मीराबाई ने कहा है कि मुझे चित्तौड़ अच्छा नहीं लगता है, क्योंकि **'थारा देसा में राणा साधु नहीं छै'** वहाँ सादु–सन्तों के दर्शन नहीं होते हैं । मुझे तो **'लागे वृन्दावन नीको'** ब्रज–वृन्दावन अच्छा लगता है, जहाँ घर–घर में हमारे प्यारे की सेवा होती है, गली–गली में सन्तों के दर्शन होते हैं ।

इसीलिए ब्रज–वृन्दावन में रहने का यही लाभ है कि यहाँ रहने वाले को कहीं तीर्थ आदि में जाने की जरूरत नहीं है क्योंकि तीर्थ तो दीर्घकाल तक सेवन करने से पवित्र करते हैं परन्तु यहाँ ब्रज–वृन्दावन में ऐसे–ऐसे संत रहते हैं, जो गंगा से भी अधिक पवित्र होते हैं । श्रीमद्भागवत के प्रारम्भ में शौनकादि ऋषियों ने कहा है –

यत्पादसंश्रयाः सूत मुनयः प्रशमायनाः ।
सद्यः पुनन्त्युपस्पृष्टाः स्वर्धुन्यापोऽनुसेवया ।।

(भा.१.१.१५)

'भगवान् के भक्तों में इतनी पवित्रता होती है कि वे गंगा को भी पवित्र कर देते हैं ।'

वे कैसे भक्त होते हैं ?

'यत्पादसंश्रयाः' एकमात्र भगवान् के चरण कमलों के अनन्याश्रित; धन, सम्पत्ति, भोग आदि के आश्रित नहीं। उनके दर्शन से ही जीव तत्क्षण पवित्र हो जाता है जबकि **'स्वर्धुन्यापोऽनुसेवया'** गंगा, हरिद्वार, काशी, प्रयाग, गंगासागर आदि तीर्थों का बहुत समय तक सेवन करने से वह पवित्रता नहीं होती है जैसी एक बार सच्चे श्रीकृष्ण–भक्तों का दर्शन मिल जाने से होती है ।

चाचा वृन्दावन दास जी ने लिखा है –

वृन्दावन सेवहु भाँति भली ।
जहाँ रसिक संतन्ह को दरसन,
चलत फिरत कुंजन गली।।

धन्य है वह ब्रज–वृन्दावन जहाँ भगवान् के सच्चे भक्तों के दर्शन सहज हो जाते हैं ।

उनकी रहनी कैसी है?

वे किसी से कुछ नहीं चाहते हैं, केवल जीवन–निर्वाह के लिए ब्रजवासियों के यहाँ से भिक्षा माँग लेते हैं, उससे उदरपूर्ति कर (पेट में २ रोटी डालकर) भगवान् की रसोपासना (कथा–कीर्तन) करते हैं ।

यही बात गोपियों ने भी कही है –

यदनुचरितलीलाकर्णपीयूषविप्रुट्
सकृददनविधूतद्वन्द्वधर्मा विनष्टाः ।
सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य दीना
बहव इह विहङ्गा भिक्षुचर्यां चरन्ति ।।

(भा. १०.४७.१८)

अरे ! कृष्ण की रूप–लीला–माधुरी से आकर्षित होकर बड़े–बड़े राजा–महाराजा राजपाट छोड़कर ब्रज में चले आते हैं और इस निष्ठुर (कृष्ण) से प्रेम करते हैं और ये निष्ठुर देखता भी नहीं है । इस कृष्ण का मिलना तो दूर रहा, इसकी लीलायें ही ऐसी मीठी हैं कि इनको जिसने एक बार भी सुन लिया, इतने से ही उसके चित्त की चोरी हो जाती

है और अपने आप उसका संसार छूट जाता है। ओह ! इसके चरित्र में ही ऐसा जादू है, ऐसा जुल्म है, ऐसा कहर है, ऐसा प्रलय है कि सुनने वालों का सब कुछ
घर–द्वार, जमीन–जायदाद सब चौका लग जाता (नष्ट हो जाता) है और इसके लीलामृत (पीयूष) को कर्ण–पुट द्वारा एक बूँद भी पान करने से हृदय का द्वन्द्व (राग–द्वेष) चला जाता है । ये अनादिकाल की मैल (कामादि विकारों की गंदगी) हमलोगों के मन में जमा है । हमें–तुम्हें एक जन्म की याद है कि 'हम इस जन्म में पैदा भए, वहाँ हमारा घर–गाँव था, हमारे माँ–बाप का नाम ये था, ऐसे भाई–बनु थे, ब्याह के बाद ऐसा घर मिला, ऐसी पत्नी आई', बस इतना याद है । लेकिन नहीं, जाने कितने जन्मों से ये मैल (गंदगी) जमा हो रही है और जाने किस–किस योनि में हम लोग गये हैं, याद नहीं है ।

गोपियाँ बोलीं कि गजब की बात तो ये है – 'बड़े–बड़े ज्ञानी ज्ञान–साधन करते हैं, योगी योग–साधन करते हैं लेकिन द्वन्द्व नहीं मिटता है ।' परन्तु यदि श्रीकृष्ण–चरित्र किसी ने एक बार एक बूँद भी पान कर लिया तो उसका द्वन्द्व (हृदय का ज्वर) मिट जाता है और जिसका द्वन्द्व मिट गया उसका संसार मिट गया । संसार ऐसे मिट गया कि कौन स्त्री? कौन पुत्र? महाप्रभु श्रीकृष्ण चौतन्य सर्वांग सुन्दरी विष्णुप्रिया जी को छोड़कर चले गये, कितनी सुन्दरी थीं लेकिन छोड़ दिया, इस तरह से 'द्वन्द्वधर्मा विनष्टाः' संसार ही नष्ट हो गया भक्तों का । बड़े–बड़े भक्त आते हैं, 'सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य दीना' घर, कुटुंब, महल–दुमहले छोड़कर दीन (गरीब) बनकर आते हैं । सच्चा भक्त तो वही होता है, ब्रज–रसिक श्रीहरिराम व्यासजी ने लिखा है –

सुने न देखे भगत भिखारी ।
तिनको काम दाम को लोभ न,
जिनके कुंज बिहारी ।।

भक्त लोग धन (ऐश्वर्य, वैभव) और विषय–भोग (मल–मूत्र) की भीख नहीं माँगते । भक्त भिखमंगा नहीं होता है । उदर–पोषण करना अलग है लेकिन वासना की भीख नहीं माँगता है कि हमको पैसा दे दो हम बैंक में जमा करेंगे, हमको मल–मूत्र दे दो हम भोगेंगे, वो भक्त नहीं है, वह तो कोई ठग होगा, भक्त ये सब नहीं करता है । सच्चे भक्त दीन (सरल, निष्कपट, निष्काम) बन जाते हैं । 'सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य' दीन कुटुम्ब को छोड़ के आते हैं, अनाथ बच्चों को छोड़ के चले आये, जवान बहू को छोड़ के चले आये रोती–बिलखती भई, कोई–कोई अपने बूढ़े माँ–बाप को छोड़ के चले जाते हैं और एक–दो नहीं, गोपियाँ कहती हैं – इस निष्ठुर (कृष्ण) से प्रेम करने वालों की कोई संख्या नहीं है, जाने कितने (असंख्य) हैं । 'विहङ्ग' माने चिड़ियों की तरह, आज चिड़िया इस पेड़ पर बैठती है, कल उस पेड़ पर जाकर बसेरा करती है, फिर उड़ करके तीसरा पेड़ पकड़ती है, इसी तरह से श्रीकृष्ण–प्रेमी घर–द्वार छोड़कर के विहङ्ग–वृत्ति से (पक्षी की तरह) रहते हैं, कोई घर नहीं है, द्वार नहीं है । 'भिक्षुचर्यां चरन्ति' भीख माँगते हैं, बड़े–बड़े राजा होकरके भी । क्यों? इस कारे (श्याम) की प्रीति में यही होता है, ये बड़ा निष्ठुर है । गोपियाँ कहती हैं – 'अलमसितसख्यै' (भा. १०.४७.१७) सखी ! ये कारे सब ठगहार, इन कारों की प्रीति मत करना, कृष्ण अकृतज्ञ है, बेदरदी है । (यह गोपियों की प्रेम–भाषा है ।)

बेदरदी तोहि दरद न आवै ।
चितवनमें चित बस करि मेरौ, अब काहे आँख चुरावै ।।
कबसों परी द्वार पै तेरे, बिन देखे जियरा घबरावै।
नारायन महबूब साँवरो, घायल करि फिर गैल बतावै ।।

पहले तो चित्त हर लिया, अब छिप गया । ये क्या प्रेम की रीति है? ऐसे ही प्रेम होता है ! पहले तो चित्त को चुरा लिया, अब तड़पाता है ।
एक सखी बोली – यही उसके प्रेम की रीति है, पहले घायल करता है फिर पीछे मिलता है ।
ये प्रेम की भाषा है, प्रेम में ऐसे ही शब्द निकला करते हैं और इस पीड़ा (तड़पने) में जो आनन्द है, उसके आगे करोड़ों–करोड़ों ब्रह्मानन्द भी तुच्छ हैं (इसको पीड़ा नहीं कहते) । श्रीकृष्ण–विरह को विषामृत कहते हैं जो ऊपर से तो विष की भाँति प्रतीत होता है लेकिन है अमृत परन्तु इसको वे ही जान सकते हैं जिन्होंने श्रीकृष्ण से प्रेम किया है । ■

वृन्दावन वृन्दावन वृन्दावन कहो रे ।
वृन्दावन की कुंजन की छाया में रहो रे ।।
भटकै मत देस देस वेष क्यों लजावै ।
कुंजन के कौने परयो जुगल क्यों न गावै ।।
राख विश्वास जिय पालन करिहैं श्रीराधा ।
वंशी अली सत्य सत्य पूजिहैं सब साधा ।।

काल से मुक्त होने का रास्ता

भगवान् की शरण में जीव चला जाए तो काल कुछ नहीं कर सकता क्योंकि भगवान् काल के भी काल हैं । सच्चे मन से कोई उनकी शरण पकड़ ले तो काल को जीत लेगा –

जो घट अन्तर हरि सुमिरै ।
ताकौ काल रूठि का करिहै, जो चित चरन धरै ।।

काल कुछ नहीं कर सकता, काल की कुछ नहीं चलेगी, भगवान् की शरण में जाओ । देखा जाता है कि भक्त लोग भी मरते हैं । मरते तो हैं, यह संसार का नियम है –

आया है सो जाएगा राजा रंक फकीर ।
एक सिंहासन चढ़ चला दूजे बंधा जंजीर ।।

एक सिंहासन पर जाएगा यानी मरने के बाद उसको अविनाशी पद मिल जाएगा और एक जंजीर में बाँधा जाएगा। इसीलिए भगवद्भक्त को मनुष्य नहीं समझो । जीव जब भगवान् का चिन्तन करता है, तब काल शक्ति से छूट जाता है, उसकी उम्र तक बढ़ जाती है । भागवत में लिखा है –

आयुषोऽपचयं जन्तोस्तथैवोपचयं विभुः ।
उभाभ्यां रहितः स्वस्थो दुःस्थस्य विदधात्यसौ ।।

(भा. ४.११.२१)

जैसे ही मनुष्य भजन करता है वैसे ही उसकी आयु बढ़ती है । अकाल मृत्यु टल जाती है । लगभग १०० वर्ष की उम्र हर व्यक्ति को मिली है, लेकिन मनुष्य जो पाप या अपराध करता है चाहे वे इस जन्म के हों या पिछले जन्म के, वे उसको पहले ही मार डालते हैं । केवल भगवान् की भक्ति वाला अकाल मृत्यु से बच जाता है । भक्ति करो, अकाल मृत्यु से बचोगे, व्याधियों से बचोगे । श्रीमद्भागवत में यह बात कही गयी है –

शारीरा मानसा दिव्या वैयासे ये च मानुषाः ।
भौतिकाश्च कथं क्लेशा बाधन्ते हरिसंश्रयम् ।।

(भा. ३.२२.३७)

यह संसार माया है, इसको देखकर जो इसे सत्य मानता है, वह पशु है । माँ–बाप सब पशु हैं, बच्चा बड़ा हुआ तो सोचते हैं इसका विवाह हो, यह भोग भोगे, इसको रोटी–पानी मिल जाए, बस इससे आगे कुछ नहीं सोचते। कोई माँ–बाप नहीं सोचता कि हमारा बच्चा संसार रूपी कारागार से मुक्त हो जाए। इसलिए चाहे माँ–बाप हैं, वे पशु हैं –

लोकांश्च लोकानुगतान् पशूंश्च
हित्वा श्रितास्ते चरणातपत्रम् ।
परस्परं त्वद्गुणवादसीधु–
पीयूषनिर्यापितदेहधर्माः ।।

(भा. ३.२१.१७)

कर्दम जी बोले – इन पशुओं को छोड़ दो । सारा संसार छोड़ दो । ये सब तुमको संसार में फँसने का मार्ग बताएँगे । ऋषभ भगवान् ने कहा है कि जो संसार में फँसाता है उसे छोड़ दो; माँ को छोड़ दो, बाप को छोड़ दो, गुरु को छोड़ दो, अगर गुरु भी चन्दा–चिठ्ठे में फँसाता है, भवसागर से पार होने की शिक्षा नहीं देता तो उसे भी छोड़ दो –

गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात्
पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात् ।

दैवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्या–
न्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम् ।।

(भा. ५.५.१८)

वह गुरु, गुरु नहीं है; वह स्वजन, स्वजन नहीं हैं; वह माँ, माँ नहीं है; वह पिता, पिता नहीं है; वह दैव, दैव नहीं है; वह पति, पति नहीं है; जो मृत्यु से छूटने का रास्ता नहीं बताता है । जो भगवान् की शरणागति न बतावे, उसको छोड़ दो; यह भगवान् की आज्ञा है । भगवान् श्रीराम ने कहा है–

एहि तन कर फल बिषय न भाई ।
स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई ।।

(रा.च.मा. उत्तर. ४४)

सभी प्रकार के सांसारिक–विषयों को छोड़ दो, यह शरीर देवताओं तक को नहीं मिलता, देवता आदि भी तरसते हैं इस मनुष्य शरीर को पाने के लिए । इस मनुष्य शरीर को पाने के बाद सब कामनाएँ छोड़कर भगवान् की शरण पकड़ लो । कबीरदास जी ने तो यहाँ तक कहा है 'साधो यह मुर्दों का गाँव ।' यहाँ कोई जिन्दा नहीं है, सब मुर्दे बैठे हैं, ऐसा क्यों कहा? क्योंकि सब मुर्दे रहते हैं अर्थात् भक्तिहीन लोग रहते हैं । शिव जी ने कहा है –

जिन्ह हरिभगति हृदयँ नहिं आनी ।
जीवत सव समान तेइ प्रानी ।।

(रा.च.मा. बाल ११३)

जिसमें भगवान् की भक्ति नहीं है तो वह जीता हुआ मुर्दा है, इसलिए यह पशुओं का गाँव है, इसको छोड़ दो; इसको छोड़ने के बाद ही मनुष्य भगवान् की शरण में जा सकता है । चाहे माँ है, बाप है, इनकी आसक्ति करोगे तो ये फँसा लेंगे । जीते जी अमृत पियो । वह अमृत कहाँ मिलता है? भगवद्भक्तों–संतों के पास ।

भक्तिहीन मानव–देह पशुवत् है । जैसे – गधे, कुत्ते शरीर धारण करते हैं, उनका जीवन केवल भोगमय होता है । तुमको इसलिए मनुष्य बनाया गया है कि अमृत पियो, अमृत क्या है? भगवान् का गुणगान । अगर कहो कि क्या खायेंगे, क्या पियेंगे, यदि दिन–रात भजन करेंगे? अरे तुम जानते नहीं हो, जिसने भक्ति रूपी अमृत पी लिया तो उसके देह–धर्म का निर्वाह अपने–आप होगा । **'प्रणत कुटुंब पाल रघुराई ।'** भगवान् 'शरणागत जनों' के कुटुंब तक का पालन–पोषण करते हैं । ■

सबसे बड़े परोपकारी

भगवान् श्रीकृष्ण ने (श्रीमद्भागवत १०.२२.३२,३३,३४,३५ में) ब्रजवासियों से कहा है –

पश्यतैतान् महाभागान् परार्थैकान्तजीवितान् ।
वातवर्षातपहिमान् सहन्तो वारयन्ति नः ।।

देखो, इन वृक्षों से सीखो । ये वृक्ष संसार के सबसे बड़े महाभाग हैं । हम लोग बड़ा आदमी (महाभाग) उसको समझते हैं, जिसके पास बहुत पैसा है, जिसकी बहुत इज्जत है लेकिन भगवान् कह रहे हैं – वे महाभाग नहीं हैं । महाभाग वे हैं, जिसका जीवन एकमात्र दूसरों के लिए है, जो परहित के लिए ही जीते हैं । जिसके हृदय में परहित की भावना नहीं है, वह मनुष्य नहीं है, मुर्दा है ।

ये वृक्ष वर्षा, हवा के झोंके, धूप, पाला स्वयं सहन कर लेते हैं; और अपने नीचे बैठने वालों की धूप, बारिश आदि से रक्षा करते हैं । इसीलिए इनको महाभाग कहा गया अर्थात् सभी प्राणी जिसके सहारे जियें वही महाभाग है ।

अहो एषां वरं जन्म सर्वप्राण्युपजीवनम् ।
सुजनस्येव येषां वै विमुखा यान्ति नार्थिनः ।।

इनका ही जन्म लेना श्रेष्ठ है क्योंकि मनुष्य ही नहीं पशु–पक्षी, कुत्ता–बिल्ली, कीड़े–मकौड़े आदि सबको वृक्ष सहारा देते हैं अर्थात् सभी प्राणियों के जीवन का सहारा बनते हैं । ये वृक्ष बारह चीजों से परहित करते हैं –

पत्रपुष्पफलच्छायामूलवल्कलदारुभिः ।
गन्धनिर्यासभस्मास्थितोक्मैः कामान् वितन्वते ।।

पत्ते, पुष्प, फल, छाया, जड़, छाल, लकड़ी, गन्ध, गोंद, राख, कोयला, अंकुर और कोपलों से .....।

ये वृक्ष जीते जी भी दान देते हैं और मरने के बाद भी देते हैं । जब जल जाते हैं तो इनकी राख काम में आती है । इनकी हड्डियाँ कोयला बनकर काम में आती हैं ।

एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनामिह देहिषु ।
प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेय एवाचरेत् सदा ।।

इसलिए देहधारियों की देह धारण करने की सफलता इसी में है कि वे परोपकार करें । कैसे? 'प्राणैरर्थैर्धिया वाचा' धन से, प्राणों से, बुद्धि से और वाणी से । हर मनुष्य को परोपकार करना चाहिए । ■

भक्त-विरह-कातर करुनामय

सनातन गोस्वामी जी नीलाचल के लिए जब जाने लगे तो रास्ते में उनको दूषित जलवायु मिली, जंगली वनस्पतियों का गन्दा रस युक्त पानी पीने से खाज (एक विशेष प्रकार की खुजली) हो गयी जिससे शरीर सड़ गया और उससे ऐसा रस निकलता जिसकी दुर्गन्ध दूर–दूर तक जाती थी किन्तु वो नीलाचल की यात्रा में सफल रहे, वह दृश्य तो देख ही लिया – वे वन–उपवन जहाँ महाप्रभु जी एकान्त में प्रेमोन्माद में श्रीकृष्ण को बुलाते थे । वो आनन्द ही अलग होता है (वह सबको नहीं मिलता), उसको देखने के लिए सनातन जी गए थे । महाप्रभु जी साक्षात् दैन्य की मूर्ति थे । हम यह कह सकते हैं कि संसार में जो कुछ दैन्य आया है वह चैतन्य महाप्रभु की कृपा से आया है, ऐसा दैन्य न पढ़ा गया, न सुना गया । इसीलिये सुदैन्य जब आ जाता है तो भगवद्कृपा आ जाती है, महाप्रभु जी ने कहा है –

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः ।।

(शिक्षाष्टक – ३)

अगर सच्चा दैन्य है, निश्चित रूप से तुम प्रभु की दया के पात्र बन जाओगे ।महाप्रभु वल्लभाचार्य जी भी यही कहा है –

न हि साधन संपत्या हरिस्तुष्यति कश्यचित् ।
भक्तानां दैन्यमेवैकं हरि तोषण साधनम् ।।

साधन सम्पत्ति (ज्ञान,वैराग्यादि) से भगवान् प्रसन्न नहीं

होते हैं, भगवान् को प्रसन्न करने का एकमात्र साधन है 'दैन्य' ।

दैन्य से उनकी कृपाशक्ति मिलती है और फिर वो माया को जीत लेता है । छोटे बन जाओ, माया को पार हो जाओगे और बड़े बनते जाओगे तो एक दिन जरूर माया खा जाएगी लेकिन हम लोग बड़ा बनते हैं, गद्दी चाहते हैं, नाम चाहते हैं, ऐश्वर्य चाहते हैं, सम्पत्ति चाहते हैं, तो माया क्या करेगी ? पटक देगी ।

इनमें दैन्य की परकाष्ठा थी, जगन्नाथ मन्दिर के राजपथ पर सनातन जी वगैरह नहीं जाते थे, उनका ऐसा भाव था कि इस पथ पर तो मन्दिर के पुजारी आदि जाते हैं, भक्तजन जाते हैं, हमारा शरीर गन्दा है, इस राजपथ पर हम कैसे चलें ? दूर से जगन्नाथ मंदिर की ध्वजा का दर्शन कर लेते थे, ये शरीर गन्दा है यह मंदिर में जाने लायक नहीं है । यह सब दैन्य की कथाएँ आज मात्र कथाएँ बन गयीं हैं, आज ऐसा दैन्य न कहीं सुनाई पड़ता है न दिखाई पड़ता है । देखा जाता है मंदिर में दर्शन करने बहुत से लोग जाते हैं लेकिन एक दूसरे को धक्का लगाते हैं कि हम पहले दर्शन करेंगे, हम पहले जाएँगे, यह सब क्या है ? ये सब देखकर याद आता है कि ये कोई दैन्य नहीं है, दैन्य तो वो था कि मन्दिर में भी प्रवेश नहीं करते थे, यह शरीर मंदिर में प्रवेश करने लायक ही नहीं है । सनातन जी नीलाचल पहुँचकर वहाँ रुके जहाँ हरिदास ठाकुर रुके थे, क्योंकि वहाँ महाप्रभु जी के पास कैसे रुक सकते हैं, उनके भक्तों के बीच में कैसे रुक सकते हैं, ये दैन्य है । महाप्रभु जी स्वयं उनका दर्शन करने जाते थे । जो जितना दीन बनता है, वह उतना ही भगवान् का प्यारा बन जाता है और जो अभिमानी है उससे भगवान् द्वेष करते हैं । नारद भक्ति सूत्र में लिखा है –

"ईश्वरस्याऽऽप्याभिमान द्वेषत्त्वात् दैन्यप्रियत्वाच्च ।"

(नारद भक्ति सूत्र)

जब तक हमारे अन्दर 'अहं' है, हम भगवान् के कृपापात्र नहीं बन सकते । इसलिए दीन बनो, प्रभु का नाम दीनानाथ हैं वह दीन से प्रेम करते हैं, रामावतार में भगवान् दण्डकारण्य में बड़े–बड़े ऋषि–मुनियों के साथ घूमते थे लेकिन भगवान् ने उनकी चर्चा नहीं की, याद भी नहीं किया कि कितने बड़े ऋषि थे और चर्चा करते थे तो बारम्बार गीध, शबरी की य नीच जाति की शबरी जिसने झूठे बेर खिलाये थे, भगवान् बोले ऐसा स्वाद आज तक कभी नहीं आया । उसकी याद करते थे । तो सनातन जी के पास महाप्रभु जी स्वयं जाते थे, दर्शन देने नहीं, उनका दर्शन करने । भगवान् स्वयं दीन बन जाते हैं –

निष्किंचना वयं शश्वन्निष्किंचनजनप्रियाः ।
तस्मात् प्रायेण न ह्याढया मां भजन्ति सुमध्यमे ।।

भगवान् रुक्मिणी से बोले –"देवी !मैं स्वयं सबसे बड़ा गरीब हूँ और गरीबों से ही प्यार करता हूँ, निष्किंचन ही मेरा भजन कर सकता है, सम्पन्न व्यक्ति मेरा भजन नहीं कर सकता है ।"

महाप्रभु जी स्वयं सनातन जी का दर्शन करने जाते थे और उनके दुर्गन्धित खाज युक्त शरीर को बलात् आलिंगन करके लिपटा लेते थे, ऐसा वो रोज करते थे, जाते ही उनको आलिंगन कर लेते थे, ऐसे लिपट जाते थे जैसे भक्त भगवान् से या भगवान् भक्त से लिपट जाता है । उस आलिंगन के स्वाद को हमलोग क्या समझेंगे ? ये हमारा पाषाण हृदय नहीं समझ सकता है । सनातन जी मना करते थे कि प्रभु ! इसमें इतना गन्दा रस निकल रहा है, दुर्गन्ध है, आप इसको मत आलिंगन करो । गौर सुन्दर महाप्रभु जी कहते– "सनातन ! मैं स्वयं पवित्र होने के लिए तुम्हारा आलिंगन करता हूँ ।" भगवान् कितना भक्तों में भाव रखते हैं, उसको हम जैसे भावहीन प्राणी नहीं समझ सकते, क्योंकि हमारे हृदय में भक्ति नहीं है, हमलोग भाव शून्य हैं, हमारा पाषाण हृदय है ।

आखिर में सनातन जी के मन में घृणा हुयी कि इस गन्दे, विषाक्त शरीर को आलिंगन करने से महाप्रभु का सुनहरा गौरसुन्दर तप्तकांचन दिव्य देह गन्दा हो जाता है, तो वह भागने लगे कि महाप्रभु जी हमको स्पर्श न करें लेकिन कहाँ भागकर जाओगे भगवान् से । भगवान् तो भक्त को ढूढ़ लेता है, भक्त का अन्वेषण करता है । एक सूरदास जी ने बड़ा सुन्दर पद गाया है –

प्रभु कौ देखौ एक सुभाइ ।
अति–गंभीर–उदार–उदधि हरि,जान–सिरोमनि राइ ।।
तिनका सौं अपने जन कौ गुन मानत मेरु–समान ।
सकुचि गनत अपराध–समुद्रहिं बूँद–तुल्य भगवान ।।

बदन–प्रसन्न–कमल सनमुख ह्वै देखत हौं हरि जैसैं ।
बिमुख भए अकृपा न निमिषहू, फिरि चितयौं तौ तैसैं ।।
भक्त–बिरह–कातर करुनामय, डोलत पाछैं लागे ।
सूरदास ऐसे स्वामी कौं देहिं पीठि सो अभागे ।।

(सूर वि.प. ६)

सूरदास जी कहते हैं – कन्हैया का स्वभाव कैसा है ? श्यामसुन्दर का भक्तों से बड़ा गहरा प्रेम है, इतना गहरा प्रेम है कि गोविन्द सखा जंगल में शौच कर रहे हैं और कृष्ण पहुँचकर उनके साथ खेल रहे हैं । भगवान् का भक्त से इतना गंभीर प्यार है कि वह भक्त के बिना रह नहीं सकते । भक्त की थोड़ी सी सेवा को भगवान् सुमेरू पहाड़ की तरह मान लेते हैं और जब भक्त अपराध करता है तो उसके समुद्र जैसे अपराध को एक बूँद की भाँति समझते हैं । सूरदास जी कह रहे हैं – श्रीकृष्ण का मुख खिला हुआ कमल की तरह प्रसन्न है, अरुणोदय की बेला में ताजे खिले हुये कमल की तरह मुस्कुराहट है । आगे कहते हैं – भक्त अगर भगवान् से विमुख हो गया, किसी कारणवश गिर गया तो गिरने के बाद भी भगवान् की वही कृपा रहती है, वही मुस्कराहट रहती है, एक क्षण के लिए भी भगवान् उदास नहीं होते । ये नहीं कि तू विमुख हुआ तो तुझे छोड़ दिया, ये सब नहीं है और अगर भक्त कहीं चला गया तो भगवान् भक्त विरह में रोते हैं, तड़पते हैं, हमारा भक्त कहाँ है ? भक्त के विरह में अश्रु बहाते हैं । भगवान् की प्रतिज्ञा है –

'मया परोक्षं भजता तिरोहितं
मासूयितुं मार्हथ तत् प्रियं प्रियाः ।।'

(भा. १०.32.21)

भगवान् ने कहा – मैं भी तुम्हारी तरह रोता हूँ। अगर भक्त भगवद् विमुख हो गया है प्रभु को भूल गया, फिर भी प्रभु उसके पीछे–पीछे जा रहे हैं, ऐसा श्यामसुन्दर का स्वभाव है, पर हम जैसे इन बातों पर विश्वास नहीं कर पाते हैं क्योंकि नास्तिक हैं, भावहीन हैं। लेकिन भगवान् का ऐसा स्वभाव है –

खुद रहा याद खुदा भूल गया,
भूलना था क्या क्या भूल गया ।
तेरी रहमत तो न भूलेगी मुझे,
मैं तुझे भूल गया भूल गया ।।

अरे ! हम जैसे अभागे ऐसे प्रभु को भूल गए । सनातन जी ने सोचा– चलो शरीर छोड़ दें, जगन्नाथ जी के रथ के पहिये के नीचे दबकर मर जाएँ क्योंकि ये महाप्रभु जी तो आलिंगन करना छोड़ेंगे नहीं और इस शरीर में से गन्दा–गन्दा रस निकलता रहता है और वो इसे हृदय से लगा लेते हैं । महाप्रभु समझ गए कि ये आत्महत्या की सोचता है । महाप्रभु जी बोले – "सनातन! ये शरीर किसका है ? शरीर किसको समर्पण किया है ?" सनातन बोले – "कृष्ण को" तो शरीर कृष्ण का है कि तुम्हारा है ? समझ गए, अरे कृष्ण का शरीर है और मैं इसको खत्म करने की सोचता हूँ – मैं क्या करने जा रहा था; अच्छा, अब नहीं मरूँगा । अब शरीर नहीं छोडूँगा लेकिन नीलाचल छोड़ दूँगा क्योंकि मैं नहीं सह सकता कि मेरे गन्दे शरीर को इसमें से गन्दा रस निकल रहा है इसको ये गौर सुन्दर महाप्रभु आलिंगन करें, अपने शरीर में लगाएँ । लेकिन महाप्रभु जी के भाव को देखो, इसको भाव कहते हैं यानि उस गन्दे रस में भी चिन्मय भावना महाप्रभु जी ही कर सकते हैं । हमलोग क्या कर सकते हैं तो महाप्रभु जी ने कहा कि मैं अपने को पवित्र करने के लिए तुम्हारा आलिंगन करता हूँ । सोचो जरा गन्दा रस निकल रहा है और इसमें चिन्मय भाव कौन कर सकता है ? भगवान् ही कर सकते हैं, ऐसा भावुक भगवान् ही है ।

'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहं ।'

महाप्रभु जी ने सनातन को बुलाकर कृपामयी दृष्टि से आलिंगन किया और उनके शरीर के सारे रोग दूर हो गए एकदम तप्तकांचन की तरह शरीर चमक उठा। इस प्रकार उन्होंने दैन्य की पराकाष्टा को क्रियात्मक रूप से दिखाया । ■

निष्काम भगवन्नाम प्रचार-प्रसार

ब्रजनिष्ठ संत पूज्य श्री बाबा महाराज, कलिकाल के आघात से ब्रजवासियों में नाम–संकीर्तन के प्रति घटती निष्ठा को देखकर अत्यधिक चिन्तित रहते थे । उनकी इस चिन्ता ने ब्रजवासियों को जाग्रत करने की आधारभूमि तैयार कर दी और इसी श्रृंखला में महाराज श्री की आज्ञा से ब्रजगोपिका स्वरूपिणी मान मंदिर की विरक्त साध्वियाँ ब्रज के हजारों गाँवों में प्रभातफेरी सम्मलेन कार्यक्रम के माध्यम से नाम–संकीर्तन के निःशुल्क प्रचार–प्रसार का अति सराहनीय कार्य कर रही हैं । श्रीमद्भागवत के अनुसार उद्धव जी ने ब्रज–गोपिकाओं की प्रशस्ति में ये उद्गार व्यक्त किये –

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः ।
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम् ।।

(भा. १०.४७.६३)

नंदराय जी के ब्रज–गोपांगनाओं की चरणरज की मैं वन्दना करता हूँ, जो हरि–गुणगान से तीनों लोकों को पवित्र करती हैं ।

वर्तमान काल में जो ब्रजवासी युग प्रभाववश कृष्ण–गुणगान से विमुख होते जा रहे थे, मान मंदिर की इन दिव्य आराधिकाओं से प्रेरणा प्राप्त कर वे पुनः प्रभातफेरी में प्रतिदिन अपने संकीर्तन की ध्वनि से त्रिलोकी को पावन बना रहे हैं । उद्धव जी जब ब्रज में आये तो उन्होंने देखा –

उद्गायतीनामरविन्दलोचनं
व्रजाङ्गनानां दिवमस्पृशद् ध्वनिः ।
दध्नश्च निर्मन्थनशब्दमिश्रितो
निरस्यते येन दिशाममङ्गलम् ।

(भा. १०.४६.४६)

गोपियाँ दधि मन्थन करती जा रही हैं और दधि मन्थन से जो ध्वनि उत्पन्न हो रही है उस ध्वनि के स्वर में स्वर मिलाकर श्रीकृष्ण के मंगलमय चरित्रों का गान कर रही हैं, जिसकी ध्वनि ऊर्ध्व लोकों तक जा रही है और समस्त दिशाओं का अमंगल नष्ट हो रहा है ।

बरसाने की प्रभातफेरी तथा ब्रज–ग्रामों में नाम–संकीर्तन का प्रचार करके ये मान मंदिर वासिनी देवियाँ भी ब्रज–गोपिकाओं के मार्ग का अनुसरण कर रही हैं ।

उद्धव जी ब्रजबालाओं की उत्कृष्ट प्रेमावस्था को देखकर कह उठे –

एताः परं तनुभृतो भुवि गोपवध्वो
गोविन्द एव निखिलात्मनि रूढभावाः ।
वाञ्छन्ति यद्भवभियो मुनयो वयं च
किं ब्रह्मजन्मभिरनन्तकथारसस्य ।।

(भा. १०.४७.५८)

समस्त देहधारियों में केवल इन गोप–वधुओं का देहधारण करना ही सफल है क्योंकि प्रेम की जिस सर्वोच्च अवस्था को ये प्राप्त हो चुकी हैं, बड़े–बड़े ऋषि–मुनि तथा हम सब भी उस अवस्था को प्राप्त करने की इच्छा करते हैं। इस उच्चतम प्रेमभाव के अभाव में अनेक जन्मों तक ब्रह्मा होना भी निरर्थक है ।

श्रीजी के मान भवन की इन प्रचारिकाओं का लक्ष्य भी कृष्ण–प्रेम की इस सर्वोच्चावस्था को प्राप्त करना है । ■

गोपाल की गौचारण लीला

चार वर्ष का अल्पवयस्क ब्रजराज कुमार मैया से गौचारण का हठ कर बैठा । मैया के वात्सल्य ने मना कर दिया – "नहीं कान्हा, गैया ने कहीं तुम्हारे दूध भरे पेट में शृंग (सींग) मार दिया तो?" उस दिन तो यशोदा नन्दन चुप हो गया किन्तु आज, कुमार अवस्था (१ से ५ वर्ष) पूरी हुई तो बस मैया का आँचल पकड़ मचल गया ....

नन्हा कान्हा – "अब मैं इन छोटे छोटे वत्सों को लेकर वन में नहीं जाऊंगा ।"

(मैया, कान्हा के घुँघराले, कज्जल केश सँवारते हुए)

मैया – "क्यों?"

नन्हा कान्हा – "अब मैं बड़ा हो गया हूँ, कपिला, कामदा, पद्मगन्धा, श्यामा, अरुणा, शुभ्रवर्णा, नन्दिनी को चराऊँगा ।"

मैया – "तो फिर बछड़े कौन चरायेगा?"

नन्हा कान्हा – "दाऊ भैया"

मैया हँस गयी ।

उसी बीच कन्हाई तो दौड़कर पहुँच गया खिरक में, पीछे पीछे मैया, दाऊ भैया, बाबा नन्द, ताऊ उपनन्द सबके सब पहुँचे गोष्ठ में ।

बाल गोपाल ने प्रतीक्षित गायों के बंधन खूँटे से खोल कर अपने हाथ में ले लिये, गायें नीलवपु कृष्ण को चाटने लगीं ।

यह देख, नन्दजी तो क्या आज उपनन्द ताऊ ने भी कृष्ण को गौचारण की स्वीकृति दे दी ।

फिर क्या था?

कार्तिक शुक्ल अष्टमी गुरूवार को महर्षि शाण्डिल्य के द्वारा ब्रज के सब लघु लघु गोप बालकों का गौचारण संस्कार सम्पन्न हो गया ।

ततश्च पौगण्डवयःश्रितौ व्रजे
बभूवतुस्तौ पशुपालसम्मतौ ।
गाश्चारयन्तौ सखिभिः समं पदै–
र्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः ।।

(भा.१०.१५.१)

सब ग्वाल, गोपाल सहित वृन्दावन को अपने पादपद्मों से चिन्हित करते हुए आगे बढ़े ।

प्रथम गौचारन कौ दिन आज ।
प्रातकाल उठि जसुदा मैया कीनौं है सब साज ।
बिबिध भाँति बाजे बाजत हैं रहयो घोष सब गाज ।
गावत गीत मनोहर बानी तजि गुरुजन की लाज ।
लरिका सकल संग संकर्षन वेनु बजाय रसाल ।
आगें धेनु चले "गोविंद" प्रभु नाम भयौ गोपाल ।।

लक्षाधिक तो गोधन है, जिनकी सेवा छोटे–छोटे कोमल

करों से कन्हाई, सखा समुदाय के सहित करते हैं । छोटी–छोटी मधुर ध्वनि करने वाली घंटिकाएँ उनके गले में बाँध दी हैं । ककुद पर रंग–बिरंगी पुष्प माला, मस्तक पर लाल कुमकुम, इस तरह से समस्त गौ वंश का भाग्योदय हो गया ।

अजा गावो महिष्यश्च निर्विशन्त्यो वनाद् वनम् ।
इषीकाटवीं निर्विविशुः क्रन्दन्त्यो दावतर्षिताः ।।

(भा.१०.१६.२)

यहाँ अजा से तात्पर्य अप्रसूता गाय (अनब्याई गाय अर्थात् बछिया) एवं महिषी शब्द से प्रसूता गाय अर्थात् ब्याई गाय यह अर्थ आचार्यों के द्वारा ग्रहीत है ।

यह भी उनके साथ प्रतिदिवस अरण्य में जाते हैं और राम–श्याम की विविध विनोद युक्त लीलाओं का आनन्द लेते हैं ।

अब तो दिन भर चारों ओर गौ–नामावली का पारायण होता है । श्रीकृष्ण कहते हैं –

"प्यारी गौ रज गंगा न्हात हौं
और जपत गौअन के नाम"

(दान लीला)

तन्माधवो वेणुमुदीरयन् वृतो
गोपैर्गृणद्भिः स्वयशो बलान्वितः ।
पशून् पुरस्कृत्य पशव्यमाविशद्
विहर्तुकामः कुसुमाकरं वनम् ।।

(भा.१०.१५.२)

वृन्दावन की भूमि, बिना जोते–बोये, स्वयं गायों के लिए उपयुक्त हो गई । चारों ओर कोमल हरित घास, फल पुष्प से लदे हुए उच्च तरु, आगे–आगे जगत् जननी गौ माता, पीछे कृष्ण यश गाता हुआ सज्जित सखा समूह और मध्य में वंशिका बजाते हुए श्याम और गलबैंया डाले बलराम –

आगे गाय पाछे गाय इत गाय उत गाय
गोविन्द को गायनि में बसवोई भावै ।
गायन के संग धावै गायनि में सचु पावै
गायनि की खुर रेणु अंग लपटावै ।
गायन सों ब्रज छायो बैकुण्ठ बिसरायो
गायन के हेत गिरि कर लै उठावै ।
"छीत स्वामी" गिरिधारी विट्ठलेशवपुधारी
ग्वारिया कौ भेषु धरै गायन में आवै ।।

गोपाष्टमी की परम्परा, आज भी नन्द गाँव में, वहाँ के गोस्वामी समाज द्वारा बड़े ही भाव पूर्ण ढंग से निभाई जा रही है । कार्तिक शुक्ल अष्टमी के दिन, दो बालकों को कृष्ण बलराम का स्वरूप धारण कराकर, नन्दगाँव के प्रत्येक घर में सखाओं की टोली जाती है, घर–घर में कृष्ण–बलराम और उनकी सखा मण्डली का स्वागत किया जाता है और नाना प्रकार के व्यंजनों का भोग लगाया जाता है । बाल विनोद से भरी कन्हैया की यह लीला आज भी गोपाष्टमी के दिन नन्दगाँव के घर–घर में साकार होती दिखाई देती है । आखिर हो भी क्यों न ! नटखट नन्दलाल प्रत्येक नन्दगाँववासी की आँखों का तारा जो है ।

गौचारण के बाद से तो कन्हैया की मानो बड़ी व्यस्त दिनचर्या हो गई है । बस दिन–रात गौ समुदाय को सुख देने की चेष्टा में संलग्न रहता है।

कविराज कृष्णदास कृत गोविन्दलीलामृतानुसार –

एक दिन मैया यशोदा के वात्सल्य ने कहा –

"लाला ! हमारे पास गौ सेवा में चतुर अनेकों दास हैं, बहुत दिन तुमने गौचारण किया, अब यह हठ छोड़ दो, मान भी जाओ । देखो, वन गमन करते समय तुम न छत्र धारण करते हो, न पन्हैया, और कुश कंटक कंकड़ युक्त दुर्गम वनों में घूमते हो, इससे हमारा हृदय व्यथित हो जाता है ।" वात्सल्यपूर्णा मैया को समझाते हुए श्रीकृष्ण ने बड़ी शिक्षाप्रद बातें कहीं –

गोपालानं स्वधर्म्मो नस्तास्तु निश्छत्र–पादुकाः ।
यथा गावस्तथा गोपास्तर्हि धर्म्मः सुनिर्म्मलः ।।
धर्म्मादायुर्यशोवृद्धिर्धर्म्मो रक्षति रक्षितः ।
स कथं त्यज्यते मातर्भीषुधर्म्मः सुनिर्म्मलः ।।

(गो.लीला.सर्ग.५.२८,२९)

"मैया ! गोप जाति का धर्म है – गोपालन अर्थात् गो सेवा । यदि यह जगत जननी छत्र पादुका धारण नहीं करतीं, तो भला मैं कैसे धारण कर सकता हूँ? यदि तू इन सब लक्ष लक्ष गायों के लिए छत्र पादत्राण का सम्यक् प्रबन्ध कर दे, तो मैं भी धारण कर लूँगा । इस समय रिक्त पद चलना ही मेरे लिए परम धर्म है । धर्म पालन से आयु, यश की वृद्धि होती है । जो मनुष्य धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है । अतः भयोन्मुक्त होने हेतु, धर्म पालन ही एकमात्र प्रशस्त उपाय है, फिर हम धर्म को क्यों छोड़ें?" फिर तो मैया बाबा दोनों ने ही गौसेवा व गौचारण की सावधानियों के विषय में कन्हैया को उपदेश दिया । ■

भेदबुद्धि वैष्णवता नहीं अपितु अपराध

मृषाधर्मस्य भार्यासीद् दम्भं मायां च शत्रुहन् ।
असूत मिथुनं तत्तु निर्ऋतिर्जगृहेऽप्रजः ।।

(भा.४.८.२)

जिस समय ब्रह्मा जी सृष्टि रचना कर रहे थे, उनसे अधर्म उत्पन्न हुआ । अधर्म की पत्नी मृषा (झूठ) से दम्भ नामक पुत्र व माया नाम की कन्या का जन्म हुआ । परिवार और बढ़ा । दम्भ व माया से लोभ और शठता का जन्म हुआ, उनसे क्रोध, हिंसा का तथा उनसे कलि (कलह) और दुरुक्ति (गाली) का जन्म हुआ । आज सर्वत्र अधर्म का सपरिवार नृत्य हो रहा है । स्वयं देख लें, झूठ के बिना पाप नहीं होता है और पाप का पुत्र है दम्भ । मैं श्रेष्ठ रसिक, मैं सर्वोच्च भक्त .....यह दम्भ है । जहाँ दम्भ है वहाँ उसकी बहिन माया (कपट) होगी और जहाँ दम्भ व माया है, वहाँ लोभ और शठता का होना अवश्यम्भावी है । किसी सेठ को फँसा लें, यह और दे जाय, ये विचार शठता (नीचता) के हैं। इन विचारों की आपूर्ति से क्रोध व हिंसा का जन्म और उससे कलि (कलह) व दुरुक्ति (गाली) का जन्म होता है । जैसे क्रोधान्ध व्यक्ति माता–बहिन की गाली देता है । वैसे ही यहाँ संकीर्णता में अन्धे लोग एक–दूसरे सम्प्रदाय व आचार्यों को अवाच्य वचन कहते हैं । आज आचार्य निन्दा, सम्प्रदाय निन्दा के पाप से समाज निस्तेज हो गया है ।

श्रीमद्राधासुधानिधि के ऊपर होने वाला विवाद भी संकीर्णता का ही संग्राम है । किसी एक सम्प्रदाय विशेष में स्वबुद्धि और अन्य के प्रति परबुद्धि, यही कलह का कारण है । यह हमारे ही सम्प्रदाय का, हमारे ही आचार्य का ग्रन्थ है, इस प्रकार का अनाग्रह अपराध है ।

इसे रस कहें या विष ?

नाम में भेद – नामापराध

'शिवस्य श्रीर्विष्णोर्य इह गुणानामादि सकलं
धिया भिन्नं पश्येत् स खलु हरिनामाहितकरः।'

(पद्मपुराण–स्वर्गखण्ड)

हम हरे कृष्ण..... महामन्त्र ही गायेंगे, हम राधे कृष्ण. ..... युगल मन्त्र ही गायेंगे – ब्रज के गाँवों में ऐसे दुराग्रहों के कारण नाम संकीर्तन प्रभात फेरी में विघटन हो गया । एक दल महामन्त्र करेगा और दूसरा दल युगल मन्त्र करेगा । यह कैसी नासमझी है । पूज्य श्री

बाबा महाराज को सद्गुरुदेव अनन्त श्रीयुत श्री प्रिया शरण बाबा जी महाराज ने यही कहा – साधन बने या न बने, साम्प्रदायिक भेद, नाम भेद जैसे गंभीर अपराधों से सदा सावधान रहना ।

श्री राधारानी ब्रज यात्रा मान मंदिर इसका आदर्श बनी । कोई युगल मन्त्र करे, महामन्त्र करे, भगवन्नाम मात्र लेने वाला पूज्य है, प्रणम्य है ।

श्रीमद्भागवत की प्रथम शिक्षा –

यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं
यद् वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम् ।
लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं
तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ।।

(भा. २.४.१५)

जिनका कीर्तन, स्मरण, दर्शन,वन्दन, श्रवण व पूजन जीवों के पाप को तत्काल नष्ट कर देता है । अब यहाँ किसी विशेष नाम का निर्देश तो नहीं किया गया कि युगल मंत्र ही पाप नष्ट करेगा अथवा महामंत्र ही पाप नष्ट करेगा ।

यस्यावतारगुणकर्मविडम्बनानि
नामानि येऽसुविगमे विवशा गृणन्ति ।
ते नैकजन्मशमलं सहसैव हित्वा
संयान्त्यपावृतमृतं तमजं प्रपद्ये ।।

(भा. ३.६.१५)

हे नाथ ! प्राणोत्सर्ग के समय आपके किसी भी नाम का उच्चारण चाहे वह अवतार सम्बन्धी देवकीनन्दन, नन्दनन्दन.....नाम है अथवा गुण सम्बन्धी दीनबन्धु,

दयासिन्धु.....नाम है अथवा लीला सम्बन्धी नाम माखनचोर, गिरिधारी.....नाम है । किसी भी नाम का संकीर्तन जन्म–जन्मान्तरों के पाप से तत्काल मुक्त कर माया का भेदन कर आपकी प्राप्ति कराने वाला है ।

एक बार कुलीन ग्रामवासी भक्तों ने श्रीमच्चैतन्यदेव से जिज्ञासा की – वैष्णव का क्या लक्षण है ? एक बार भी जिसने कृष्ण नाम लिया, वह वैष्णव है – श्री मन्महाप्रभु जी ने कहा । किन्तु इस प्रकार तो मनुष्य मात्र वैष्णव है क्योंकि ऐसा कोई मनुष्य नहीं होगा कि जिसने किसी ना किसी कारणवश एक बार भी भगवन्नाम का उच्चारण न किया हो, ऐसा ग्रामवासियों ने विचार किया । पूर्ण संतोष न होने पर उन्होंने पुनः वही प्रश्न किया – वैष्णव कौन है ?

जो निरन्तर कृष्ण नाम लेता है, वही वैष्णव है, श्रीमन्महाप्रभु जी ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया । किन्तु सतत् नाम जप करने वाले भी कल्मषरहित नहीं हो पाते हैं । छः छः लाख नाम जप कर रहे हैं और बगल में रहनेवाले साधकों से बोलचाल नहीं है । अतः आवश्यक नहीं है कि निरन्तर नाम जप करने वाला भी प्रधान वैष्णव है ।

तृतीय बार वैष्णव का लक्षण पूछे जाने पर श्रीमन्महाप्रभु जी ने कहा –

जाहार दर्शने मुखे आइये कृष्णनाम ।
ताहारे जानिय तुम वैष्णव प्रधान ।।

(चै.च.मध्यलीला.षोडश परिच्छेद. ७३)

जिसके दर्शनमात्र से मुख में श्री कृष्णनाम स्फुरित हो उठे, वही वैष्णव प्रधान है । कथनाशय एक नाम लेने वाला भी वैष्णव है । रसिकों की आज्ञा है – साधारण भक्तों के अपराध से भी सावधान रहो ।

भक्त साधारण के अपराधहिं कांपत डरनि हियो ।।

(श्रीबिहारिनदेवजी)

यन्नामधेयश्रवणानुकीर्तनाद्
यत्प्रह्वणाद्यत्स्मरणादपि क्वचित् ।
श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते
कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात् ।।

(भा. ३.३३.६)

जिसकी जिह्वा पर भगवन्नाम विराजमान हो गया, वह चाण्डाल होते हुए भी सर्वपूज्य है ।

मन्येऽसुरान् भागवतांस्त्यधीशे
संरम्भमार्गाभिनिविष्टचित्तान् ।
ये संयुगेऽचक्षत तार्क्ष्यपुत्र–
मंसेसुनाभायुधमापतन्तम् ।।

(भा. ३.२.२४)

श्री उद्धवजी की दृष्टि में तो भगवान् से युद्ध करने वाले भी भागवत (वैष्णव) हैं । वस्तुतः निष्ठा तो यही है। सबमें अभेद दृष्टि ही वैष्णवता है । फिर एक दूसरे संप्रदाय की वाणी–पोथी ना पढ़ना, मंदिरों में ना जाना, एक–दूसरे आचार्यों की वाणी न गाना । यह वैष्णवता नहीं अपितु महापाप ही है। ■

NATURE OF VRAJA

Vrajati gacchati itivrajah – that which moves around is Vraja. This is the original understanding of the word Vraja. The places where Nanda Baba dwelt and moved around with his cows, calves, family and associates are all called Vraja. "Vrajantigavahyasminnativrajah – the land where the cows, cowherd men and women wander is known as Vraja." Vraja particularly denotes the land of the Supreme Person Vrajendra-nandana Sri Krsna's pastimes. SrimadBhagavatam gives a deeply moving description of vraja:

puṇyābatavraja-bhuvoyadayaṁnṛ-liṅga
gūḍhaḥpurāṇa-puruṣovana-citra-mālyaḥ
gāḥpālayansaha-balaḥkvaṇayaṁś ca veṇuṁ
vikrīdayāñcatigiritra-ramārcitāṅghriḥ

Bh. 10.44.13.

O sakhi, just see how greatly fortunate and blessed are the tracts of land in Vraja, for there the primeval Personality of Godhead, disguising Himself with human traits, wanders about, enacting His many pastimes! Adorned with wonderfully variegated forest garlands, He whose feet are worshiped by Lord Śiva and goddess Ramā vibrates His flute as He tends the cows in the company of Balarāma.

Although Sri Bhagavān's nāma (names), rupa (form), dhāma (abode), līlā (pastimes), guṇa (attributes) and jana (pure devotees), are all on the same platform, still, it has been declared by rasikāvaisnavas experts in tasting rāsa, that, the most simple and sublime way to approach Sri Bhagavān is through the dhāma. Even though taking shelter of Sri nāma is very easy, it cannot be chanted 24 hours a day as one needs to sleep. So, neither it is possible to chant hari-nāma incessantly, as one may not be situated on such an elevated state of consciousness nor is it possible to meditate on the form or continuously glorify the qualities of Sri Bhagavān. Again, it is not feasible to uninterruptedly sing the glorious līlās of the Supreme Person and at the same time it is difficult to have uninterrupted access and service of the jana as well. Hence, the saints clearly advise that one should take shelter of the dhāma, and be reliant on it. While in dhāma, you are there in all conditions. When you sleep you are in the dhāma and when you wake up you still are in the dhāma.

Shatakkaar has mentioned hundreds of ślokas in this regard. He has gone to the extent of saying;

dūre caitanya caranāh,
kaliravirbhūnmāhān
krsnapremā kathamprāpyo,
vinā vrindāvane ratim

Vrindāvan mahiāmritam

All the ācāryas have already left. The very air that touched them could deliver the fallen jīva's caught up in conditioned life of material existence. Śrī Caitanya Mahāprabhu, Śrī VallabhācāryaMahāprabhu, Swami Haridāsaji, Śrī HitharivanshjiMahārāj, Mahavānikār-Hari Vyāsaji are all gone. How can one obtain Kṛṣṇa prema now? Shatakkaar says that the only thing one can resort to now is the "dust of Vraja" Vṛndāvana raja , the dhāma raja.

Even in ŚivaUpāsanā it is stated; kāshyāmmarnānmuktih. If you cannot do much, just go and die in Kāśi.

The same is found in Rāma Upāsana :

baṁdaŭ avadha purī ati pāvani,
sarajū sari kali kaluṣanasāvani.

R.C.M.B. 16

These are the bare facts. The glories of the dhāma hold true in all yugas including the present age of Kali-yuga and even at the time of the pralaya, partial or complete annihilation. It destroys the vices of Kali-yuga. A visual proof is the number of people visiting thedhāma every year. On the very day of guru-purnima millions come to pay there respects to Sri Giri-Goverdhana. Similarly, millions come to Vṛndāvana, Gokul, Barṣāṇā - specially during Holi and Rādhāṣṭami, Nandgaon, Dauji, Kamyavan, and Mathura. Millions upon millions visit

the dhāma every year to reap the benefits of its potencies. This is a practical proof that dhāma is alleviating the devotees from the vices of Kali-yuga. The same holds true for Awadh dhāma.

pranavaŭ pura nara nāri bahorī,
mamtā jinha para prabhuhi na thorī

R.C.M.B. 16

One should pay obeisance's to the people who live in the dhāma. They are the 'transformed loved ones', beloved of Sri Bhagavan - just by the virtue of their taking shelter of the dhāma.

A very special aspect of the dhāma is that even the most unpardonable, unforgiveable offence is exculpated by the mercy of thedhāma. A mere rajaka, washerman had made a great offence towards Bhagavatī Sītā by commenting that Rāmā could not be Rāmāfor accepting His wife Sītā back. He was not alone, as he had encouraged an entire community who harbored such ill feelings. However, all of them were pardoned of their deplorable offence by the mercy of the dhāma, just as a mother pardons the many offences of her child against herself.

siya nimdaka agha ogha nasāe,
loka bisoka banāi basāe.

R.C.M.B. 35

The most merciful dhāma obliterated this great wave of transgressions by this group of offenders against mother Sita , they were pardoned by the most merciful nature of dhāma. This is the greatest proof of the unimaginable potencies of the dhāma, as they all remained and lived in the dhāma.

daras aparasamajjana aru pānā,
harai pāpa kaha beda purānā

Merely by staying in this prakata-dhāma, one attains the nitya-dhāma.

rāma dhāmadāpurī suhāvani,
loka samasta bidita ati pāvani
cāri khāni jaga jīva apārā,
avadha tajĕ tanu nahi saṁsārā

R.C.M.U. 4

If one cannot do much, one should at least go to the dhāma and die there. The glories of the dhāma are sung by even Lord Himself. Lord Rāmā glorified Awadha-dhāma to his beloved associates when he was returning from Lankā. He said that although Vaikuṇṭha is most absolute and is glorified by the Vedas and the Purāṇas, Awadha is far more superior even though it is just a puri and appears mundane on bhurloka. The same has also been said about Vraja:

aho madhupurī dhanya vaikunthāchchagarīyasī.

or

jadyapi saba baikuṁṭha bakhānā,
veda purāna bidita jagu jānā
avadhapurī sam priya nahĭ soū,
yaha prasaṁga jānai kou koū

R.C.M.U.4

This concept is beyond the grasp of most to have such śraddhā, and such niṣṭhā. One may be a great scholar or even a truly renounced person, but such niṣṭhā, firm faith is rarely seen. Lord Rāma himself says that such niṣṭhā is very difficult to achieve.

janmabhūmi mama purī suhāvani,
uttara disi baha sarajū pāvani

In this dhāma, the Lord performs unlimited pastimes; even līlās such as the birth of Sri Bhagavan are found here which are not present in the nitya-līlās.

jā majjana te binahĭ prayāsā,
mama samīp nara pāvahĭ bāsā
ati priya mohi ihā̃ ke bāsi,
mama dhāmadā purī sukharāsi

Merely by staying in the dhāma, one is blessed with affection from the Lord Himself. One becomes His beloved.

One who sees any difference between the Lord and His nāma, His dhāma or dhāmi, Sri Bhagavan Who performed līlās here, cannot be considered a devotee, no matter what. Even if one is a highly learned scholar, it does not make a difference. He is certainly not a devotee.

jā majjana te binahĭ prayāsā,
mama samīp nara pāvahĭ bāsā

One realizes the Lord just by dint of just living in the dhāma. Simply by bathing and living in the dhāma will bring one to the Lord without effort. This is one of foremost aspects of the dhāma-mahima. This has also been declared by the rasikās of Vraja and is a universal siddhānta, truth. One achieves all perfection in the dhāma. It is a simple solution to realize God. This belief is vital and foremost pre-requisite when one arrives in the dhāma, and stays in the dhāma. Even if one has no astha, belief, one still realizes God, but, in that case the time duration may be greatly extended. One surely realizes God, be it in this birth or a later one. Even the ones without firm faith shall receive pure satsanga some day and be purified, though it might be billions of years or kalpas in the future. There are several proofs to this statement and I shall talk about them later. This is the most important aspect for people like us who are living in and taking exclusive shelter of sri-vraja- dhāma. Jai Sri Radhe ! ■

ब्रजधाम की सेवा में सतत् प्रयत्नशील मान मंदिर

मान मंदिर से ब्रज धाम की सेवा के अनेक कार्य प्रारम्भ किये गये । यद्यपि यहाँ न कोई धनबल है और न ही जनबल; एकमात्र श्रीराधारानी के भरोसे सभी कार्य प्रारम्भ किये गये और उनमें सफलता भी मिली । सफलता का मूल कारण है – आराधना । आराधना की शक्ति से मान मंदिर जिस कार्य में लगा उसमें सफलता मिली ।

यद्यपि ब्रज के स्थलों की रक्षा में बहुत कठिनाइयाँ भी आयीं लेकिन हम उन सबकी चर्चा नहीं करेंगे क्योंकि अपना यश नहीं गाना चाहिए । अनेक आपत्तियाँ आयीं किन्तु भगवन्नाम के प्रभाव से सभी बाधाओं से रक्षा हुयी और विजय हुई । इसलिए हम प्रयत्न कर रहे हैं कि ब्रज के हर गाँव में भगवन्नाम की प्रभात फेरी हो । इसके लिए मान मंदिर से कुछ संत और साध्वियों को भगवन्नाम प्रचारार्थ भेजा गया जिन्होंने ब्रज के व ब्रज से बाहर ३२ हजार ग्रामों में भगवन्नाम की प्रभात फेरियाँ शुरु करवा दीं । हर गाँव में निःशुल्क माइक, ढोलक बाँटे गये क्योंकि भगवन्नाम से ही देश की व ब्रज की रक्षा सम्भव है ।

यदि ब्रज–मण्डल के समस्त संतजन सहयोग करें तो ब्रज के समस्त पर्वतों, कुण्डों, वनों, लीला–स्थलियों आदि की रक्षा अवश्य होगी ।

संतजनों से इसलिए कह रहे हैं क्योंकि तीर्थों की रक्षा की जिम्मेदारी सबसे पहले संतों की है । भगवान् की तरफ से इन्हीं को नियुक्त किया गया । इसका हम प्रमाण भी देते हैं – जब भागीरथ जी ने गंगा जी को नीचे लाने के लिए तप किया और गंगा जी का आवाहन किया तो गंगा जी ने नीचे आने से मना कर दिया । वे बोलीं –

किं चाहं न भुवं यास्ये नरा मय्यामृजन्त्यघम् ।
मृजामि तदघं कुत्र राजंस्तत्र विचिन्त्यताम् ।।

(भा. ६.६.५)

हे राजन् ! तुम मुझे मृत्युलोक ले जाना चाहते हो जहाँ पापी लोग आयेंगे और अपना पाप मुझमें धोयेंगे, मुझे गंदा करेंगे । तो उनसे भागीरथ जी ने कहा –

साधवो न्यासिनः शान्ता ब्रह्मिष्ठा लोकपावनाः ।
हरन्त्यघं तेऽङ्गसङ्गात् तेष्वास्ते ह्यघभिद्धरिः ।।

(भा. ६.६.६)

माँ ! आप चलो, वहाँ संतजन भी रहते हैं, संत तीर्थों को भी पवित्र कर देते हैं, वे संत आपको भी पवित्र करेंगे; जब तक संत हैं तब तक कुछ नहीं होगा आपका ।

अस्तु तीर्थों का शोधन करने की जिम्मेदारी किसकी है? 'संतों की' ।

कई जगह ये बात कही गयी है –

भवद्विधा भागवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो ।
तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता ।।

(भा. १.१३.१०)

संत ही तीर्थ को तीर्थ बनाते हैं और कोई दूसरा नहीं बना सकता है । हम साधु हैं हमारी जिम्मेदारी है कि धामों की, तीर्थों की रक्षा के विषय में उचित प्रयास करें । कार्य तो प्रभु करते हैं हमारी क्या सामर्थ्य है जो ब्रज की रक्षा करें । राधारानी की कृपा के बल पर हम ये विश्वास के साथ कहते हैं कि एक दिन यमुना जी की ब्रज में निर्मल धारा भी बहेगी । आज यमुना जी को इतना दूषित कर दिया गया है कि उसे एक समाचार पत्र में मृत नदी घोषित किया गया है । हमलोग कृष्ण उपासक बनते हैं और यमुना जी के शुद्धिकरण के लिए कुछ नहीं करते हैं तो धिक्कार है हमें । यद्यपि लोग कहते हैं कि यमुना जी की निर्मल धारा बहना बहुत कठिन है । लेकिन भगवान् की कृपा से कठिन कुछ नहीं है । जब हम पर्वतों की रक्षा के लिए अनशन पर बैठे थे तब भी लोगों ने कहा था कि पर्वतों को बचाना असम्भव है लेकिन हमने कहा था 'असम्भव कुछ नहीं', अरे ! हम भगवान् का नाम लेते हैं, उनके नाम के बल से सब संभव है ।' जब एक नास्तिक नेपोलियन कहता था –

Impossible is a word to be found only in the dictionary of fools.

'मूर्खों के शब्दकोश में मिलता है ये 'असम्भव' शब्द ।'

इसलिए हम ये विचार करके चलते हैं – काम करेंगे नहीं काम हो गया । हम यमुना जी के बारे में भी यही कहते हैं कि काम हो गया, समझ लो । हम लोग श्रीजी के बल पर चलते हैं, जो विरोध करेंगे वे सब हार

जायेंगे। हम अवश्य सफल होंगे इसमें कोई शंका नहीं है ।

सभी आचार्यों की वाणियों में धाम–सेवा की महिमा–

सभी ग्रन्थों ने, सभी आचार्यों ने यही कहा है कि ब्रज की सेवा करो । चैतन्य महाप्रभु जी ने अपने परिकरों को यही आज्ञा देकर ही ब्रज में भेजा था कि –

मथुरार लुप्ततीर्थेर करिह उद्धार ।

(चै.च.मध्य.३३.५४)

जाओ, मथुरा के तीर्थों का उद्धार करो

.....उन्होंने किया भी; क्योंकि साधु नहीं करेगा तो और कौन करेगा ?

स्वामी हरिदास जी ने कहा –

मन लगाय प्रीति कीजै, कर करवा सौं
ब्रज–बीथिन दीजै सोहनी ।
वृन्दावन सौं, बन–उपवन सौं,
गुंज–माल हाथ पोहनी ।।

श्री हरिवंश जी ने भी यही कहा –

श्री हरिवंश अनत सचु नाहिं बिनु या रजहि लिए ।

श्रीछीत स्वामी जी ने कहा –

अहो बिधना तोपै अंचरा पसार मांगों ।
जनम–जनम दीजो मोहि याही ब्रज बसिबौ ।।

महावाणीकार श्रीहरिव्यास देवाचार्य जी कहते हैं –

यही है यही है भूलि भरमों न कोउ
भूलि भरमें तें भव भटक मरिहौ ।

यहाँ तक कि जितने भी संत हुए हैं सभी ने धाम–निष्ठा दिखाई है । अगर ऐसी ब्रज–निष्ठा नहीं है अर्थात् जो आचार्यों ने लिखा है वह हमारी क्रिया में नहीं है तो हम कैसे अपने को उन आचार्यों का, उस परम्परा का सेवक घोषित कर सकते हैं । हम नहीं है उनके सेवक ।

भक्त श्रीसींवा जी का धाम रक्षार्थ प्राणोत्सर्ग –

श्रीभक्तमाल जी में नाभाजी कहते हैं कि धाम निष्ठा स्वयं भगवान् सिखाते हैं – एक भक्त हुए हैं श्री सींवा जी पूरा छप्पय नाभा जी ने उन्हीं के लिए लिखा है –

द्वारका देख पालण्टती अचढ़ सीवैं कीधी अटल ।।
असुर अजीज अनीति अगिनि मैं हरिपुर कीधौ ।
सांगन सुत नै साद राय रनछोरै दीधौ ।।
धरा धाम धन काज मरन बीजा हूँ मांड़ै ।
कमधुज कुटकै हुवौ चौक चतुरभुजनी चांड़ै ।।
बाढ़ेल बाढ़ कीवी कटक चाँद नाम चांढ़ै सबल ।

श्रीनाभा जी कहते हैं कि एक म्लेच्छ अजीज खां ने सारी द्वारिका में आग लगा दी । द्वारिका जल रही थी परन्तु सींवा जी ने द्वारिका की रक्षा की और उसे सुरक्षित किया ।

रणछोर भगवान् ने आवाज लगाई अरे, सांगन के बेटे ! तू आ; वहाँ पर टीकाकार श्रीप्रियादास जी लिखते हैं कि देखो भगवान् की कृपा, आज प्रभु अपने भक्त से कह रहे हैं 'करौ प्रतिपाल मेरौ सुनि मति भीजिये' तू मुझे बचाय ये कृपा है उनकी । इसका हम प्रमाण दे रहे हैं – वहाँ पर लिखते हैं जमीन–जायदाद, पैसा–धेला, घर–मकान आदि के लिए तो हर आदमी प्राण दे देता है लेकिन सींवाजी जाकर अकेले चले घोड़े पर चढ़कर, परिवार वालों ने रोका फिर भी नहीं रुके, जाकर उन्होंने यवनों की सेना का विध्वंस किया और सदा के लिए द्वारिका को सुरक्षित कर दिया और वहीं प्राण छोड़ दिये ताकि हमारा कोई सम्मान न करे – उन्हें नित्यधाम की प्राप्ति हुई और द्वारिकाधीश ने उनका सम्मान किया ।

आज हम लोग धाम की रक्षा के लिए कुछ करेंगे तो प्रभु बहुत प्रसन्न होंगे ।

श्रीहरिराम व्यास जी ने लिखा है –

मीठी वृन्दावन की सेवा ।
स्यामा स्यामहि नीकी लागै,
ज्यों बालकहिं कलेवा ।।

भक्तो, संतो !माला फेरना ही भजन नहीं है, धाम की सेवा करो । जैसे बच्चे को कलेवा दे दो तो वह प्रसन्न हो जाता है वैसे श्री राधारानी और श्यामसुन्दर धाम की सेवा से प्रसन्न होते हैं ।

युगल सरकार स्वयं करते हैं धाम सेवा –

इस धाम की सेवा श्रीराधामाधव स्वयं करते हैं । हर अवतार में उन्होंने की । श्रीसीताराम जी ने भी की । धाम की सेवा स्वयं इसलिए करते हैं क्योंकि ये 'धाम' जब प्रभु लीला संवरण करके चले जाते हैं तब भी हम जैसे पापियों के लिए मार्ग दिखाता है ।

बंदउँ अवध पुरी अति पावनि ।
सरजू सरि कलि कलुष नसावनि ।।

(रा.च.मा.बाल. १६)

कलियुग की शक्ति को ये धाम महाराज ही नष्ट कर रहे हैं । दश करोड़ से अधिक लोग प्रतिवर्ष ब्रज में आते हैं ।

अगर धाम नहीं होता तो कहाँ जाते ?

धाम नहीं होता तो कैसे उपासना चलती ?

धाम नहीं होता तो कौन राधा–राधा, कहता ?

धाम नहीं होता तो क्या ब्रज संस्कृति रहती ?

अर्थात् नहीं रहती, इसलिए जैसे भगवान् जाते हैं अपना नाम छोड़कर के उसी तरह अपना धाम भी छोड़ जाते हैं ताकि उसका आश्रय लेकर जीव हमारी प्राप्ति कर ले ।

चारि खानि जग जीव अपारा ।
अवध तजे तनु नहि संसारा ।।

(रा.च.मा.बाल. ३५)

धाम में जो प्राण छोड़ता है उसे दुबारा इस संसार में नहीं आना पड़ता ।

काशी के बारे में कहा गया है –

"काश्यां मरणान्मुक्तिः"

यही बात ब्रज के बारे में कही गयी है ।

व्यास जी ने कहा –

वृन्दावन में मंजुल मरिबो ।

अगर कुछ नहीं बनता तो यहाँ धाम में आकर मर ही जाओ, निश्चित कल्याण होगा ।

'धाम–सेवा' श्रीजानकी जी; ने की जब वे चित्रकूट में थीं; जिनके करकमल इतने कोमल थे कि दर्पण भी नहीं उठा सकती थीं ।

यस्या करः श्राम्यति दर्पणेऽपि
शनैति खेलं कलशं वहन्त्यः ।

वे ही सीता जी कलशा में पानी भरकर वृक्षों को सींचती थीं ।

तुलसी तरुबर बिबिध सुहाए ।
कहुँ कहुँ सियँ कहुँ लखन लगाए ।।

(रा.च.मा.अयो. २३७)

उसी तरह ब्रज में भी है । यहाँ श्रीराधारानी ने ब्रज–वृन्दावन के एक–एक पल्लव को अपने करकमलों से सजाया है ।

राधाकरावचितपल्लववल्लरीके
राधापदाङ्कविलसन्मधुरस्थलीके ।

(श्रीराधासुधानिधि १३)

'वृन्दावन महिमामृत' में भी लिखा है कि श्रीराधिकारानी आलवाल बना रही हैं और श्रीश्यामसुन्दर पानी लाते हैं, लताओं को सींचते हैं –

आबाल्यं जलसेचनेन वरणेनावालनिर्माणतः
स्वेन श्रीकरपल्लवेन मृदुना श्रीराधिकामाधवौ ।
यान् संवर्ध्य विवाह्य नव्य कुसुमाद्यालोक्य सन्नर्मभि–
र्मोदेते सुलता तरुनहह तान् वृन्दावनीयान्नुमः ।।

(वृन्दावन महिमामृतम् २.११)

ब्रज का एक–एक वन श्री राधामाधव का बनाया हुआ है, ब्रज के एक–एक पर्वत की श्री राधामाधव पूजा करते हैं । आज वह ब्रजभूमि कहाँ जा रही है । आज उस ब्रजभूमि की क्या दशा हो रही है । अगर कृष्ण उपासक होकर हम लोग इस धाम की सेवा नहीं कर पाये तो धिक्कार है हमारी साधुता को, धिक्कार है हमारी वैष्णवता को । अस्तु हम सभी का धर्म यही है कि इस धाम की सेवा–सुरक्षा करें। ■

Watch Live Satsang
By
Shri Ramesh Baba Ji Maharaj

www.sadhna.com/live.html
Every Day 7:20 AM (India Time)

श्री राधारानी ब्रजयात्रा

(मानसी परिक्रमा)

बरसाना – गहवरवन (नित्य बिहार), मानमंदिर (मानलीला), दानगढ़ (रति दान), मोरकुटी, सांकरी खोर (दधिदान लीला), विलासगढ़ (विलास लीला), श्रीजी मंदिर (वृषभानु महल), प्रिया कुण्ड या पीली पोखर, ब्रजेश्वर महादेव (वृषभानुजी द्वारा पूजित महादेव), रावड़ वन, पाडर वन (साँझी लीला के स्थान), वृषभानु सरोवर (वृषभानुजी के स्नान का कुण्ड), (माहेश्वरी कुण्ड – पार्वती जी ने श्वि जी को गोपी बनाया था), दोहनी कुण्ड, चित्रा महासखी का चिक्सोली गाँव, गहवरवन वापिस । डबारा – (रंगदेवीजी का गाँव) सूर्यकुण्ड, नौबारी–चौबारी (राधारानी के गुड्डा–गुड़िया खेलने का स्थल), रत्न कुण्ड (राधारानी ने रत्नों की खेती की थी), श्याम शिला (कृष्ण बलदेव के बैठने का स्थल, यहाँ बैठकर नौबरी–चौबारी में बैठी श्रीराधा को देखते थे) । चम्पकलता जी का करहला गाँव, घमंडदेवाचार्य जी का रासमंडल (रास प्राकट्य), व्याहुला कंकड़ कुंड (ब्याह के कंकड़ खोले गए), कदम्बखंडी, मड़ोई गाँव, बैठक जी, ललिता कुंड, श्रीकृष्ण प्रपौत्र बज्रनाभजी की समाधि, पिसाया गाँव, मन्दाकिनी गंगा (आकाश गंगा को यहाँ ब्रजवास मिला), लौधौली (लौधांग ऋषि की तपस्थली) गिरीश कुंड, अंजनवन (विशखा जी का आंजनौख), अंजन शिला, अज्जन बिहारी, किशेरी कुंड, प्रेम सरोवर (युगल का प्रथम प्रेम स्थल), विह्वल वन, विह्वला देवी, संकेत वट, राधा रमण जी के दर्षन, संकेत देवी, विवाह स्थल, श्याम कुंड, दोमिल वन, (युगल मिलते थे), पूरनमासी प्रोतानी की गुफा, नंदगाँव – उद्धव क्यार (उद्धव गोपी संवाद हुआ था), सूर्यकुंड, ललिताकुंड, नन्द बाबा की बैठक, यशोदा कुंड, हाऊ–बिलाऊ (यशोदा कृष्ण को इनसे डराती थी), दधि माट, काजर कुंड, चरण पहाड़ी (चरण चिन्ह), पहनावली (पनिहारी कुंड), वृंदादेवी, वृंदा कुण्ड, पावनसरोवर, मोतीकुण्ड, (कृष्ण ने मोती की खेती की), मोर कुण्ड, आसेश्वर महादेव, टेर कदम्व (कदम्ब पर वंशी बजा गायें बुलाते थे), जाब गाँव, किशोरी वट, कोकिलावन, रत्नाकर कुण्ड, रासमंडल, बड़ी बठेन, दाऊजी दर्शन, बलभद्र कुण्ड, छोटी बठेन, चरणपहाड़ी, (बहुत से चरण चिन्ह), चरण गंगा, कामेर (मनमोहन ठाकुर), कामरू वन (कृष्ण की कामरी खोई थी), ब्यास कुंड, शुक कुंड, दुर्वासा, दहगांव (दधि भोग), ब्रजभूषण ठाकुर, रासोली, रासमंडल, श्रीनाथजी की बैठक, कोटवन, सूर्यकुंड, चमेली वन, हताना, शेषशायी, क्षीरसागर, पौड़ानाथ दर्शन, नंदन वन, कोसी (कुसवन), गोमती कुंड, रत्नाकर कुंड, फारेन, प्रहलाद कुंड, पैगांव, नागा जी दर्शन, शेरगढ़ (खेलन वन) बलभद्र कुंड, ऐचादाऊ (दाऊ जी ने यमुना जी का आकर्षण किया था), विहारवन, रास मंडल,

वारुणी कुण्ड, कासरोट, अक्षयवट, तपोवन, चीरधाट (चीर हरण लीला), गांगरोल (गर्गजी व गंगाजी का गाँव), नंदघाट (नन्द बाबा को वरुण के दूत पकड़ ले गए थे), बसई (नन्दबाबा की वासस्थली), सेई, वत्सवन (ब्रह्मा जी ने बछड़े चुराए थे), सेई से आटस होते हुए वृन्दावन, बिहारी जी, राधावल्लभ जी, राधारमण जी, राधा दामोदर जी, गोपीनाथ जी, मदनमोहन जी, गोविन्ददेव जी, शह जी, मीरा के गिरिधारी, निधि वन, सेवा कुंज, वंशीवट, गोपेश्वर, कालीदह आदि ।

वृन्दावन परिक्रमा – भतरोड़, अक्रूर घाट आदि दर्शन, यमुना पर कर भांडीर वन, भांडीर कूप, भांडीर वट (ब्रह्मा जी ने वेद विधि से राधा कृष्ण विवाह कराया), प्राचीन वंशीवट, श्रीदामा जी के दर्शन, मंट, दाऊजी के दर्शन, भीम गाँव होते हुए मानसरोवर (मान सरोवर में स्नान से शिव जी का गोपी रूप, मान लीला), राधारानी दर्शन, बैठक जी, पानीगाँव, लौहवन, शंखचूड़ का प्रसंग, तारापुर होते हुए नंदी–बंदी (इन्हें लोग देवी मानते हैं किन्तु गर्ग सहिंता में ये सखियाँ हैं), दाऊ जी, रेवती और बलराम के दर्शन (मंदिर में), क्षीरसागर, यमुना तट पर चिंताहरण महादेव (शिव जी दर्शन की चिंता से यहीं बैठे थे), ब्रह्माण्ड घाट (लाला

ने माटी खाई), पूतना खार, यमलार्जुन, नन्दकूप होते हुए चौरासी खम्भा, नन्द किला, रमणरेती, गोपतलैया, गोविन्द स्वामी की बैठक, गोकुल, गोकुल चंद्रमा, नवनीतप्रिया, बैठक जी, चन्द्रावली देवी, रावल (श्री जी का जन्म स्थान), मथुरा, जन्मभूमि, महाविद्या, द्वारिकाधीश, विश्राम घाट, बैठक जी, मधुवन, बैठक जी, मधुसूदन कुण्ड, ध्रुव जी की तपस्थली, तारसी, तालवन, बेत्र गंगा, दाऊ जी दर्शन, कुमुद वन, कपिल जी, गंगासागर, सतोहा, शान्तनु कुण्ड, गणेशरा, खेचरी (पूतना का गाँव), गन्धर्व कुण्ड होते हुए बहुलावन बाटी, रार, दाऊ जी के दर्षन, मुखराई (श्री जी की ननसार), चन्द्रसरोवर (यहाँ छः महीने महारास हुआ, यहाँ कई बैठकें हैं), पैंठा, चतुर्भुज जी के दर्शन, पूंछरी (परिक्रमा शुरू), नवल कुण्ड, अप्सरा कुण्ड, सुरभि कुण्ड, गोपाल पुरा (जतीपुरा), श्री नाथ जी का मंदिर, गिरिराज जी, मानसीगंगा (कृष्ण के मन से प्रगट), चकलेश्वर, उद्धवकुण्ड, राधा कुण्ड, कृष्ण कुण्ड, कुसुम सरोवर (कृष्ण ने श्री जी का पुष्प श्रृंगार किया) नारद कुण्ड, श्यामकुटी के भीतर, रत्नकुण्ड, रत्न सिंहासन, ग्वाल पोखरा, गिरिराज जी, हरदेव जी, दानघाटी (दान लीला), आन्योर, संकर्षण कुण्ड, गौरीकुण्ड, गोविन्द कुण्ड, पूछरी, परिक्रमा पूर्ण, श्यामढाक, श्रीनाथ जी की बैठक, बहज, डीग, परमदरा, बूढ़ेबद्री, जड़खोर की गुफाएँ, आदिबद्री, गंधमादन, नर–नारायण, विन्ध्याचल, मैनाक आदि पर्वत, गाल, पसोपा, केदारनाथ जी, चरण पहाड़ी (वंशी बजायी, चरण चिन्ह), लुकलुककुण्ड, गयाकुण्ड, रामेश्वर, लंका, विमलकुण्ड, चंद्रमा जी, मदनमोहन जी, वृन्दादेवी, गोपीनाथजी, श्रीकुण्ड, बैठकजी, खिसलिनी शिला, व्योमासुर गुफा, भोजन थाली, कामेश्वर महादेव, कनवारा, नागाजी की कदमखंडी, ऊँचा गाँव, ब्याहुवलो (मेंहदी के चिन्ह), सखी कूप, देह कुण्ड, ललिता अटा, दाऊ जी, त्रिवेणी कूप, राधा बाग, बरसाना । ■

ब्रज के वास्तविक स्वरूप को प्रकाशित किया है मान मंदिर वासिनी साध्वी मुरलिका जी के शोध ग्रन्थ 'रसीली ब्रज यात्रा' ने

ब्रज भूमि के विषय में अब तक कोई ऐसा साहित्य उपलब्ध नहीं था, जिससे ब्रज के आध्यात्मिक व भौतिक स्वरूप का वास्तविक ज्ञान हो सके । ब्रजभूमि में आने वाले करोड़ों श्रद्धालु अपनी आस्था के अनुसार कतिपय स्थानों तक ही सीमित रह जाते । ब्रज का व्यापक क्षेत्र है, जिसका प्राचीनतम शास्त्रों, पुराणों व संतों के आधार पर एक वृहद् शोध ग्रन्थ का निर्माण परम विरक्त संत श्रीरमेश बाबा जी महाराज के सान्निध्य में बाल साध्वी मुरलिका जी द्वारा किया गया । ग्रन्थ को दो भागों में विभक्त किया गया है । प्रथम भाग आन्तरिक परिक्रमा का, जो ८१८ पृष्ठ का प्रकाशित हो चुका है तथा द्वितीय भाग अभी बाह्य परिक्रमा या बाह्य सीमा का प्रकाशनीय है, जो अगले माह तक प्रकाषित हो जायेगा । उसके लिए साध्वी मुरलिका जी निरन्तर गूढ़तम स्थलों की खोज व लेखन में तत्पर हैं । कितने ही दुरूह स्थलों का अनुसन्धान किया जा रहा है । ब्रज की सीमा उनके अनुसार ग्वालियर के निकट गोहद, अलीगढ़, पलवल, गुड़गाँव से वटेष्वर तक बताई गई है । इन दोनों प्रकाशनों से ब्रज का ही नहीं समग्र अध्यात्म पक्ष का बड़ा ही उपकार होगा । यही नहीं, बाल साध्वी मुरलिका अपनी निष्काम भागवत कथाओं से राष्ट्र में एक आदर्श स्थापित कर रही हैं । ■

श्री राधा मान बिहारी जी

श्री मान मंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट
ब्रज विकास का प्रमुख केन्द्र

परम पूज्य विरक्त संत
श्री रमेश बाबा जी महाराज
बरसाना, ब्रज

दर-दर की ठोकर खाती हुई अनाथ, विकलांग गायों की सेवार्थ विशाल गौशाला - 30,000 गायों कि मां कि तरह सेवा चल रही है

ब्रज के 5300 हेक्टेयर दिव्य पर्वत को खनन से बचाकर उन्हे सुरक्षित वन घोषित कराया और 1.5 लाख पेड़ लगाये

जन चेतना भगवन्नाम प्रचार प्रसार हेतु लगभग 30,000 गाँवो में प्रचार। निःशुल्क ढोलक, माईक एवं साहित्य प्रदान कर वृहद प्रभात फेरियों का संचालन

पिछले 60 वर्षो से ब्रज के विरक्त संत श्री रमेश बाबा जी के सान्निध्य में अखण्ड हरिनाम संकीर्तन, भगवत कथा तथा आराधाना की अविरल धारा

पिछले 25 वर्षो से प्रति वर्ष लगभग 15 हजार यात्रियों को निःशुल्क भोजन, आवास, उपचार जैसी सेवाएँ प्रदान करते हुए 40 दिवसीय ब्रज 84 कोस कि रसीली यात्रा कराने का पुनीत कार्य

निःशुल्क श्रीमद्भागवत कथा के माध्यम से देश-विदेश में भगवन्नाम प्रचार व ब्रजधाम सेवा की प्रेरणा प्रदान करना

ब्रज क्षेत्र में शिक्षा के प्रचार-प्रसार हेतु शैक्षिक क्रान्ति के माध्यम से विद्यालयों एवं गुरुकुल की स्थापना एवं संचालन.

ब्रज के लुप्त हो रहे दिव्य कुण्डों की पुर्नस्थापना, जीर्णोद्धार, संरक्षण - 32 कुण्ड तैयार.

अतिथि, भक्तजन व संतजनों के लिए प्रतिदिन अखण्ड भंडारा

यमुना जी के शुद्धिकरण का देश व्यापी महा अभियान,
www.saveyamuna.org

कथा एवं सत्संग कि लाखों सीडी, डीवीडी का निःशुल्क वितरण

मान मन्दिर
सेवा संस्थान ट्रस्ट
गहवरवन, बरसाना (मथुरा)

अपार सत्संग निःशुल्क डाउनलोड करने की सुविधा.....www.maanmandir.org

फोन : 09927338666, 09927194000, 09811101236,

RNI Reference No.: 1300259 Title Code:-UPHIN48109

श्री राधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा

ब्रज परिक्रमा साक्षात् धाम की उपासना है । भगवदापराध, भक्तापराध आदि अक्षम्य अपराधों का मार्जन भी धामोपासना से हो जाता है। श्रीब्रह्मा जी का गोप बालकों व गो वत्सों की चोरी का पाप व उनको लीला से अलग करने का अपराध भी धाम की परिक्रमा से समाप्त हुआ था । उन्हें यह उपाय स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने ही बताया था –

ब्रज परिक्रमा करहु देह कौ पाप नसावहु ।
ब्रह्मा अस्तुति कर चले हरि दीनो उपहार ।।

मत्स्य पुराण में ब्रज परिक्रमा का माहात्म्य इस प्रकार बताया गया– 'शेषनाग के फणों में ठीक मध्यस्थल पर कुमुद नामक फण विरजित है । उसके ऊपरी भाग में समस्त भगवद्धामों का फल स्थित है जो है ब्रजमण्डल । इसकी चौरासी कोस की परिक्रमा के बीच स्थित हैं श्री राधाकृष्ण के नित्य बिहार की लीला स्थलियाँ। ब्रजमण्डल की परिक्रमा करने से सभी इच्छायें पूरी होती हैं व अध्यात्मिक सुख मिलता है । यहाँ दान, पूजा, व वास आदि करने से नित्य धाम गोलोक प्राप्त होता है। ब्रज भूमि में निवास करने वालों को मरने के बाद पुनर्जन्म नहीं होता।' इतना ही नहीं –

पुण्यं लक्षगुणं लब्ध्वा कृतेऽस्मिन्ब्रजमण्डले ।
कृष्णेन निर्मितास्तीर्थाः सार्द्धद्वयसहायका ।।

ब्रज मण्डल में किया हुआ पुण्य अन्य स्थानों की अपेक्षा लाख गुना फल देता है क्योंकि यहाँ स्वयं श्रीकृष्ण ने २५ हजार लीला स्थलियों का निर्माण किया है ।

रे मन वृन्दाविपिन निहार ।
विपिनराज सीमा के बाहर हरिहूँ को न निहार ।।

अर्थात् रे मेरे मन, केवल वृन्दावन को प्रेम से निहार और उसकी सीमा के बाहर कृष्ण मिलें तो भी न निहार । श्री प्रबोधानंद जी ने कहा है –

'वृन्दारण्ये वरं स्यां कृमिरपि परतो नो चिदानन्ददेहो ।'

वृन्दावन में मुझे कीड़ा बनना पसन्द है, अन्यत्र मुझे चिन्मय देह नहीं चाहिए । श्री हित हरिवंश जी के वचन –

श्री हरिवंश अनत शचु नाहीं, बिन या रजही लीये ।।

केवल ब्रजरज की निष्ठा ही सत्य है और सब मिथ्या है। स्वामी हरिदास जी ने भी कहा है –

मन लगाय प्रीति कीजै कर करवा सों,
ब्रज वीथिन दीजै सोहनी ।।

वैराग्यपूर्वक रहकर ब्रज में धाम सेवा करो । श्रीछीत स्वामी जी ने इसी ब्रजभूमि की याचना की है –

अहो विधना तोपैं अँचरा पसारि माँगौं,
जनमु–जनमु दीजै याही ब्रज बसिबौ ।।

हे प्रभु ! मैं तुमसे आँचल फैलाकर ये माँगता हूँ कि मुझे जन्म–जन्म ब्रज का वास मिले ।

MAAN MANDIR
SEVA SANSTHAN TRUST
Gahvarvan, Barsana, (Mathura)

Website : www.maanmandir.org
E-mail : ms@maanmandir.org,
magazine@maanmandir.org
Tel. : +91-9927338666, 9837679558, 9927194000